RNI No.: MPHIN/2018/77137

ISSN 2582-483X

पाठशाला
भीतर और बाहर

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

वर्ष-6 अंक-21 सितम्बर 2024
तिमाही, भोपाल

पाठशाला भीतर और बाहर

सितम्बर 2024 (वर्ष 6, अंक 21)

सम्पादक मण्डल

- **हृदयकान्त दीवान**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा,
  बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  hardy@azimpremjifoundation.org
  मो. 9999606815

- **मनोज कुमार**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा,
  बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  manoj.kumar@apu.edu.in
  मो. 9632850981

- **गौतम पाण्डेय**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  खसरा नम्बर 40 और 51, विदिशा बायपास
  रोड, कान्हासैया, भोपाल 462022
  gautam@azimpremjifoundation.org
  मो. 9929744491

प्रकाशक

Azim Premji University

- **अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय**
  सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज,
  बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
  सरजापुरा, बेंगलूरु 562125 कर्नाटक
  Web: www.azimpremjiuniversity.edu.in

कार्यकारी सम्पादक

- **गुरबचन सिंह**
  अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय
  खसरा नम्बर 40 और 51, विदिशा बायपास
  रोड, कान्हासैया, भोपाल 462022
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

- **रजनी द्विवेदी**
  द्वारा-अमित जुगरान, आसाम वैली स्कूल, बालिपारा
  तेजपुर, आसाम 784101
  rajni.dwivedi@azimpremjifoundation.org
  मो. 9101962804

- **प्रतिभा कटियार**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  खसरा नम्बर 360, आमवाला तरला
  देहरादून, उत्तराखण्ड 248008
  pratibha.katiyar@azimpremjifoundation.org

रिव्यु पैनल

अमन मदान टुलटुल बिस्वास यतीन्द्र सिंह
अंकुर मदान राजीव शर्मा सुशील जोशी
विश्वंभर रेवा यूनुस नवनीत बेदार दिशा नवानी
कॉपी एडिटर : अतुल अग्रवाल

सम्पादकीय कार्यालय

- **सम्पादक**
  पाठशाला भीतर और बाहर
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव
  सोसायटी, ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा,
  भोपाल, म.प्र. 462039 फोन-0755-4074060
  pathshala@apu.edu.in
  gurbachan.singh@azimpremjifoundation.org
  मो. 8226005057

सलाहकार सम्पादक

- **जगमोहन कठैत**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  खसरा नम्बर 360, आमवाला तरला
  देहरादून, उत्तराखण्ड 248008
  jagmohan@azimpremjifoundation.org

- **सुनील कुमार साह**
  एम-13, अनुपम नगर, टीवी टॉवर के पास,
  शंकर नगर, रायपुर 492007
  sunil@azimpremjifoundation.org

- **सिद्धार्थ कुमार जैन**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसायटी,
  ई-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा, भोपाल 462039
  siddharth.jain@azimpremjifoundation.org

- **दीपक कुमार राय**
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन
  प्लाट नं. ए 413-415
  सिद्धार्थनगर-ए, होटल नाँगीस प्राइड के सामने
  जवाहर सर्किल के पास, जयपुर, राजस्थान
  deepak.rai@azimpremjifoundation.org

डिज़ाइन एवं प्रिंट

- **गणेश ग्राफिक्स,**
  26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स,
  एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल, म.प्र. 462011
  ganeshgroupbpl@gmail.com
  मो. 9981984888

- **आवरण चित्र :** पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर
  अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रायपुर,
  छत्तीसगढ़

पाठशाला भीतर और बाहर पत्रिका, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन का हिन्दी प्रकाशन है। यह शिक्षकों, शिक्षक प्रशिक्षकों, अन्य ज़मीनी कार्यकर्ताओं व शिक्षा से सरोकार रखने वाले सभी व्यक्तियों और संस्थाओं के लिए विचार-विमर्श का एक मंच है। पत्रिका का उद्देश्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत व्यक्तियों के अनुभवों व आवाज़ को जगह देकर शिक्षा के विमर्श को गहन व यथार्थपरक बनाना है।

अनुक्रम

सम्पादकीय 4

परिप्रेक्ष्य

1. फर्डिनेंड के बहाने : इंसान की पहचान और व्यक्तित्व निर्माण की उलझन पर बात / अनिल सिंह 7
2. हम नईं बनात रोटी... / सुमन पटेल 11
3. बच्चों के मन से मस्तिष्क तक / ज़ीनत 17

कक्षा अनुभव

4. सुबह की सभा : बदलाव की शुरुआत / अंशिका शर्मा 22
5. मापन सिखाने की रोचक यात्रा / सुभाष चन्द सैनी 26
6. शाला में पुस्तकालय : पढ़ने-लिखने के सन्दर्भ में / धीरज पटेल 32
7. बच्चों के साथ इबारती सवालों को हल करने की चुनौतियाँ और हमारे प्रयास / रेखराम साहू 38

विमर्श

8. किशोरावस्था : शिक्षकों व शिक्षार्थियों के नज़रिए की पड़ताल / काजल सिंह 43

शिक्षणशास्त्र

9. धाराप्रवाह पठन / रविशेखर वर्मा 51
10. पाठ्यपुस्तक तक ही क्यूँ सीमित न हो कोई अवधारणा / शिफ़ा ख़ान 57

पुस्तक चर्चा

11. ज़मीनी अफ़सानों का संकलन... एक शहर, एक पहाड़, एक मोहल्ला / नीतू यादव 62

साक्षात्कार

12. चुनौतियों से पार पाने के लिए संवाद और विश्वास बहुत महत्त्वपूर्ण हैं / शिक्षिका अर्चना अरोड़ा से दीपक राय की बातचीत 66

ऑनलाइन

कक्षा अनुभव

13. बच्चों को पाठक बनाना : शिक्षकों से उपजे अनुभव / कमलेश चंद्र जोशी 71

पाठक चश्मा 72

लेखकों के लिए 80

पत्रिका में छपे लेखों में व्यक्त विचार और मत लेखकों के अपने हैं।
अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का उपयोग शैक्षणिक और ग़ैर-व्यावसायिक कार्यों के लिए किया जा सकता है।
लेकिन इसके लिए लेखक एवं प्रकाशक से अनुमति लेना एवं स्रोत का उल्लेख अनिवार्य है।

सम्पादकीय

हर यात्रा में कुछ पड़ाव आते हैं, जहाँ ठहरकर हम पिछले सफ़र को मुड़कर देखते हैं, और आने वाले सफ़र को और बेहतर बनाने के प्रयास करते हैं। *पाठशाला भीतर और बाहर* अपने 21वें अंक के प्रकाशन के साथ ही उस पड़ाव पर है जहाँ पिछले सफ़र की स्मृतियाँ मुस्कुरा रही हैं, और आने वाले सफ़र की तैयारी चल रही है। हम सबकी पत्रिका *पाठशाला भीतर और बाहर* आगामी 22वें अंक से एक नए सफ़र की शुरुआत कर रही है। इस मौक़े पर पत्रिका के अब तक के सफ़र को याद करना लाज़िमी है।

जुलाई 2018 में पत्रिका का पहला अंक प्रकाशित हुआ था। तब से अब तक पत्रिका ने अपने सभी पाठकों और लेखकों के साथ मिलकर 21 अंकों का सार्थक सफ़र तय किया है। *पाठशाला* का मुख्य विषय स्कूली शिक्षा रहा है, और इसका मक़सद रहा है शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे सन्दर्भ व्यक्तियों, स्कूल के शिक्षकों और शिक्षक शिक्षा से जुड़े प्रशिक्षकों को उनके दक्षता संवर्धन के लिए पढ़ने योग्य उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराना। इतना ही नहीं, *पाठशाला* के रूप में, शिक्षा में काम करने वाले, और इससे सरोकार रखने वाले लोगों के लिए एक ऐसी जगह का बन्दोबस्त करना जहाँ वे अपने ज़मीनी अनुभवों व सैद्धान्तिक विचारों को साझा कर सकें, ताकि शिक्षा के विमर्श और संवाद को गहन और वास्तविक बनाया जा सके।

शुरुआत में पत्रिका अर्द्धवार्षिक थी, लेकिन शुरुआती 4 अंकों के प्रकाशन के साथ ही इसे त्रैमासिक करने की ज़रूरत महसूस हुई। *पाठशाला* ने लगातार यह प्रयास किया कि शिक्षा के क्षेत्र में आने वाली ज़मीनी ज़रूरतों को समझा जा सके, और ज़मीनी अनुभवों, शिक्षकों के प्रयासों को इसमें शामिल किया जा सके। इसके अन्तर्गत शिक्षणशास्त्र, परिप्रेक्ष्य, विमर्श, कक्षा अनुभव, साक्षात्कार, संवाद और पुस्तक / फ़िल्म चर्चा जैसे स्तम्भों के माध्यम से विविध लेखों को प्रकाशित किया गया। दिसम्बर 2020 के सातवें अंक से *पाठशाला* में एक नया स्तम्भ 'पाठक चश्मा' शुरू किया गया। पाठक इसमें छपने वाले लेखों के बारे में चिन्तनशील टिप्पणियाँ लिखते हैं। इन टिप्पणियों से पत्रिका को सँवारने में मदद मिलती है। लेख लिखने व अन्य सामग्री के विकास में फ़ील्ड के सन्दर्भ व्यक्तियों और शिक्षकों के साथ संवाद से उनकी भागीदारी को बढ़ाया गया है। *पाठशाला* के अब तक छपे 21 अंकों में 260 से ज़्यादा लेख प्रकाशित हुए हैं।

पाठशाला में छपी सामग्री में शिक्षा के ज़्यादातर मसलों पर सारगर्भित सामग्री प्रकाशित हुई है। पत्रिका में विशेषतौर पर स्कूली शिक्षा के विभिन्न विषय क्षेत्रों, भाषा, सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित और पर्यावरण अध्ययन के उद्देश्यों, परिप्रेक्ष्य और इन्हें पढ़ाने के तरीक़ों पर लेख प्रकाशित हुए हैं। भाषा शिक्षण में ज़्यादातर सामग्री बुनियादी साक्षरता व संख्या ज्ञान और पढ़ने-लिखने पर आधारित रही है। विषय क्षेत्रों के साथ ही, मूल्यांकन, बाल साहित्य, पुस्तकालय, जेंडर, कोविड के दौरान सीखने की क्षति और इसे पाटने के तरीक़ों, संवैधानिक मूल्यों के शिक्षण, प्रिंट समृद्ध वातावरण, टीएलएम, वैज्ञानिक सोच, डायरी लेखन, दीवार पत्रिका, गतिविधि-आधारित शिक्षा, आदि से जुड़े आलेख भी पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। ज़्यादातर लेख विश्लेषणपरक व चिन्तनशील रहे हैं। इस दौरान पत्रिका के सामाजिक अध्ययन, गणित और स्कूल पुस्तकालय थीम पर विशेषांक भी प्रकाशित किए गए हैं।

'संवाद' में शिक्षा के समकालीन व गम्भीर विषयों पर शिक्षा में काम करने वाले लोगों के विचारों को प्रकाशित किया गया है। अब तक छपे 20 संवाद में 125 व्यक्तियों ने सहभागी या सहजकर्ता के रूप में विचार प्रस्तुत किए। 'साक्षात्कार' में शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य करने वाले शिक्षकों के अनुभव-आधारित प्रयासों को प्रकाशित किया जाता है।

अब तक आप सभी के सहयोग और प्रेम ने पत्रिका के सफ़र को ख़ुशनुमा बनाया है। अब पत्रिका अगले अंक यानी दिसम्बर में प्रकाशित होने वाले 22वें अंक से एक नए रंग-रूप में आपके सामने होगी। इस नएपन में शामिल है पत्रिका की पहुँच को ज़्यादा पाठकों तक ले जाना, यानी अब यह पत्रिका तीन भाषाओं हिन्दी, अँग्रेज़ी और कन्नड़ा में प्रकाशित होगी। पत्रिका मूल रूप में हिन्दी में प्रकाशित होगी जिसका अनुवाद अँग्रेज़ी और कन्नड़ा में होकर प्रकाशित होगा। इसमें लेखकों और पाठकों का दायरा बढ़ेगा जो पत्रिका के उद्देश्यों को और सार्थक करेगा, ऐसी उम्मीद है। पत्रिका में आपको अब कुछ नए स्तम्भ दिखेंगे, पत्रिका रंगीन होगी, रूप, आकार व डिज़ाइन के अलावा लेखों की गढ़न भी अलग दिखेगी। लेकिन उद्देश्य वही है, सरकारी पूर्व प्राथमिक, प्राथमिक और उच्च प्राथमिक स्कूलों से जुड़े अनुभवों को सँजोना, पाठकों को उनकी ज़रूरत की सामग्री उपलब्ध कराना, और सरकारी शिक्षा को लेकर सकारात्मक माहौल बनाना।

बदलाव की इस प्रक्रिया में, पत्रिका में छपने वाले लेख मुख्यत: शिक्षकों और शिक्षा कर्मियों, और शिक्षा में ज़मीनी स्तर पर काम करने वाले लोगों के विचारशील अनुभवों पर आधारित होंगे। कक्षा अनुभव-आधारित वे लेख भी *पाठशाला* में प्रकाशित किए जाएँगे जिनमें प्रभावी शिक्षणशास्त्रीय समझ के आधार तलाशे जा सकें। इन सभी लेखों का वैचारिक तालमेल *एनसीएफ़-एसई, एनसीएफ़-एफ़एस,* और *एनईपी 2020* के प्रावधानों से होगा।

तो *पाठशाला* के इस नए सफ़र पर निकलने से पहले आइए जानते हैं इस अंक में क्या-क्या सँजोया गया है। *पाठशाला* के इस 21वें अंक में 11 लेख हैं। लेख *फर्डिनेंड के बहाने : इंसान की पहचान* और *व्यक्तित्व निर्माण की उलझन,* अनिल सिंह ने लिखा है। फर्डिनेंड की कहानी के ज़रिए लेखक बताते हैं कि बच्चों के व्यक्तित्व का विकास उनकी नैसर्गिक ख़ूबियों व प्रतिभाओं के माफ़िक़ होना चाहिए। दूसरे लेख में, लेखिका सुमन पटेल बच्चों से घर-परिवार और समाज में होने वाली काम-आधारित ग़ैर-बराबरी के दृष्टान्तों पर चर्चा करती हैं। ज़ीनत का लेख *बच्चों के मन से मस्तिष्क तक,* कक्षा में अनुशासन बनाने या शिक्षण के दौरान डर या भय का माहौल बनाने की ख़िलाफ़त करता है। अंशिका का लेख *सुबह की सभा, बदलाव की शुरुआत* में वो सुबह की सभा को शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी, जीवन्त बनाने के अनुभवों को साझा करती हैं।

सुभाष चंद सैनी के लेख *मापन सिखाने की रोचक यात्रा* में बच्चों के साथ मापन की अवधारणा, उसकी इकाइयों व पैमाने से लम्बाई को मापने पर किए गए काम के अनुभवों को साझा किया गया है। *बच्चों के साथ इबारती सवालों को हल करने की चुनौतियाँ और हमारे प्रयास,* में लेखक रेखराम साहू ने बच्चों के साथ इबारती सवालों पर काम के अनुभव लिखे हैं। *शाला में पुस्तकालय : पढ़ने-लिखने के सन्दर्भ में* लेखक धीरज बच्चों के साथ मिलकर स्कूल में पुस्तकालय बनाने और उसके उपयोग के अपने प्रयास व उनसे होने वाले बदलावों के बारे में बात करते हैं। काजल सिंह ने अपने लेख *किशोरावस्था : शिक्षकों व शिक्षार्थियों के नज़रिए की पड़ताल में,* अलग-अलग तरीक़ों से उन कारणों को जानने की कोशिश की है जिनसे कक्षा में किशोरावस्था से जुड़े विषय पढ़ाना समस्याप्रद बन जाता है।

कमलेश जोशी अपने लेख, *बच्चों को पाठक बनाना : शिक्षकों से उपजे अनुभव,* में शिक्षकों से चर्चा के आधार बच्चों को पाठक बनाने के तरीक़ों और ज़रूरी माहौल के बारे में बताते हैं। यह लेख आप ऑनलाइन पढ़ेंगे। रविशेखर वर्मा, *धाराप्रवाह पठन* लेख में कक्षा में बच्चों के साथ उनमें धाराप्रवाह पठन कौशल विकसित करने के लिए की कई गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत करते हैं। एक और लेख, *पाठ्यपुस्तकों तक ही क्यूँ सीमित न हो कोई अवधारणा,* में लेखिका शिफ़ा ख़ान द्वारा किए गए एक अध्ययन के ब्योरे हैं। *चुनौतियों से पार पाने के लिए संवाद और विश्वास बहुत महत्त्वपूर्ण हैं,* शिक्षिका अर्चना अरोड़ा से यह साक्षात्कार दीपक कुमार राय ने किया है। इस बार की पुस्तक चर्चा *ज़मीनी अफ़सानों का संकलन... एक शहर, एक पहाड़, एक मोहल्ला* के बारे में है। इस समीक्षा को लिखा है नीतू यादव ने।

लेख भेजने के लिए लेखकों की सुविधा के लिए कुछ सुझाव पत्रिका के पेज 80 पर दिए गए हैं। इनके अनुसार लेख भेजने से सम्पादकीय टीम को इन्हें प्रकाशित करने में आसानी होगी।

उम्मीद है, ये बदलाव पत्रिका की उपयोगिता को बढ़ाने में मददगार होंगे।

शुभकामनाओं सहित,

सम्पादक मण्डल

फर्डिनेंड के बहाने
इंसान की पहचान और व्यक्तित्व निर्माण की उलझन पर बात

अनिल सिंह

एक स्तर पर हम यह मानते हैं कि हर बच्चा अनूठा होता है। शुरुआती कुछ वर्षों तक बच्चे के इस अनूठेपन को स्वीकारा भी जाता है, और सेलिब्रेट भी किया जाता है। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होने लगते हैं, वयस्कों की और समाज की कोशिश होने लगती है कि बच्चे, उनसे जो अपेक्षित है, वही सीखें और करें। इस कहानी पर चर्चा के ज़रिए लेखक कहते हैं कि हर बच्चे को उसके अपने व्यक्तित्व, उसकी अपनी सोच के अनुसार विकसित होने देने की स्वतंत्रता देनी ही चाहिए। -सं.

हम जो हैं, जैसे हम सोचते हैं, व्यवहार करते हैं, वैसा ही क्यों करते हैं? क्या हम कुछ और भी हो सकते थे? क्या हमारा व्यवहार कुछ अलग भी हो सकता था? क्या हमने ख़ुद को हमारे लिए सोचे गए ढाँचों से अलग देखने की कोशिश की है? अगर किसी ने यह कोशिश की है तो हमने उसे किस तरह देखा है? ये कुछ मूल प्रश्न हैं जो शिक्षा से सीधे जुड़ते हैं। हर बच्चे में कुछ नैसर्गिक ख़ूबियाँ होती हैं, हर बच्चे की अपनी प्रतिभा होती है, उसे शिक्षक द्वारा पहचानना, उस बच्चे की उस प्रतिभा को निखारने के अवसर देना शिक्षक की ज़िम्मेदारी है। ये प्रतिभा, ये ख़ूबियाँ, उनके जेंडर, जाति, समुदाय, आदि से निरपेक्ष होती हैं। समाज अकसर प्रतिभाओं को पारम्परिक सोच के ढाँचे में बाँध देता है। स्कूल का, शिक्षकों का काम यह है कि वे उस ढाँचे को तोड़ बच्चे की नैसर्गिक प्रतिभा को निखरने दें। हर हुनर की एक ख़ुशबू है, हर व्यक्तित्व का एक सौन्दर्य है, बस वो किसी सोच के दायरे में क़ैद न हो, कोई घुटन न हो।

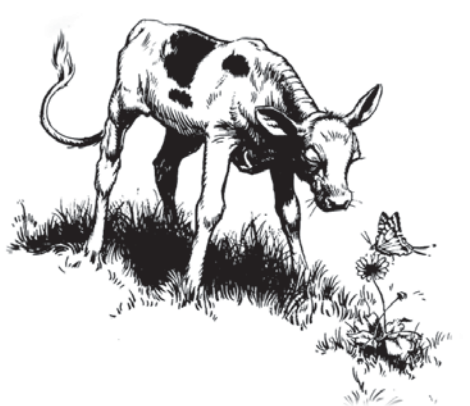

फर्डिनेंड की कहानी ऐसी ही एक कहानी है जो पारम्परिक छवि निर्माण के ढाँचे से इतर बात करती है। इस कहानी में संवेदनशीलता की, समझ की खिड़कियाँ खुलती हैं। बैल है तो ऐसा ही होगा, गाय होगी तो ऐसी ही होगी, स्त्रियाँ ऐसी होती हैं, पुरुष ऐसे होते हैं। लड़कों को ऐसे काम करने चाहिए, ऐसे खेल खेलने चाहिए। लड़कियों को इस तरह के काम करने चाहिए, ये ही खेल खेलने चाहिए। ऐसी तमाम पारम्परिक भूमिकाओं, व्यवहार के बारे में नए सिरे से सोचने की ओर इशारा करती है फर्डिनेंड की ये कहानी।

फर्डिनेंड एक बछड़ा है जो दुनिया के द्वारा उसके लिए निर्धारित तरीक़ों से नहीं, बल्कि

अपनी तरह से, अपनी मर्ज़ी से जीना चाहता है। वह छुटपन से ही चारागाह में अपने पसन्दीदा पेड़ के नीचे अपनी मनपसन्द जगह पर दिनभर बैठता है। फूलों की ख़ुशबू में डूबे रहना उसे पसन्द है। अपने हमउम्र बछड़ों की तरह उसे उछलना-कूदना, आपस में सींगें टकराना, और लड़ना-झगड़ना पसन्द नहीं। लेकिन बैलों के लिए तो यही तय है कि वे तगड़े और दमदार बनें, ताक़तवर और ग़ुस्सैल बनें, फुर्तीले और लड़ाका हों। उनके बड़े-बड़े नुकीले सींगों और तगड़ी माँसपेशियों को देखकर लोग उनसे ख़ौफ़ खाएँ।

यही इस कहानी की ख़ासियत है जो बताती है कि समाज किस तरह अपनी सोच को, अपेक्षा को एक व्यक्तित्व की गढ़न का ज़रूरी सामान बना देता है। कहानी सिर्फ़ फर्डिनेंड को बलशाली, लड़ाका और फुर्तीला होने को लेकर सामाजिक सोच के बारे में बात नहीं करती, बल्कि पूरे समाज के बारे में बात करती है जो एक बैल को दमदार लड़ाका ही देखना चाहता है कुछ और नहीं।

सोच की बाड़ेबन्दी को तोड़ने की कोशिश करती यह कहानी शिक्षा में काम करने वालों के लिए काफ़ी महत्त्वपूर्ण है।

इन दिनों हम क्या देखते हैं? किशोर उम्र के लड़के-लड़कियाँ अपनी पहचान और व्यक्तित्व निर्माण के संकट से जूझ रहे हैं। अव्वल तो उन्हें स्कूली शिक्षा ऐसा मौक़ा ही नहीं दे रही कि वे अपनी पसन्द, रुझान और नैसर्गिक स्वभाव के साथ आगे बढ़ पाएँ और अपनी तरह से जी पाएँ। फिर परिवार और व्यापक समाज की तरफ़ से उनपर दबाव है कि वे उनकी अपेक्षा के अनुरूप तैयार हों।

डॉक्टर, इंजीनियर, आईटी एक्सपर्ट, बिजनेस एक्सपर्ट, आईएएस, आईपीएस और आईएफ़एस की ही सारी क़वायद है। *नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020* में विविध विकल्पों के प्रावधान हैं। राष्ट्रीय दस्तावेज़ में दिए इन विकल्पों के बाद भी स्कूल इन्हें खुलेपन के साथ स्वीकार नहीं कर पा रहे हैं। संगीतकला, माटीकला, चित्रकला, अभिनय, सिनेमा, साहित्य, रचनात्मक लेखन, कशीदाकारी, डिज़ाइनिंग, आदि स्कूली पाठ्यचर्या का ही हिस्सा हैं। लेकिन इसके लिए न तो स्कूलों की और न ही अभिभावकों की तैयारी दिखती है। रही-सही कसर कोचिंग संस्थानों के शिकंजे ने पूरी कर रखी है जो डॉक्टर, इंजीनियर और बिजनेस प्रोफ़ेशनल्स बनाने की मशीनें लगाकर बैठे हैं। इनके इतर जाने का रास्ता नहीं है। और अगर कोई रास्ता तलाशे भी तो वह अकेला और उपेक्षित पड़ जाने वाला है।

कहानी में फर्डिनेंड एक मज़बूत किरदार की तरह उभरता है। वह फूलों की ख़ुशबू के

साथ बड़ा होता है। है तो वह बैल ही, भरा-पूरा, हृष्ट-पुष्ट और तगड़ा बैल। लेकिन किसी को डराने या मारने के लिए नहीं। सींगें और आँखें तरेरने के लिए नहीं। सिर टकराने या पैरों से ज़मीन कुरेदकर अपनी बैलानगी दिखाने के लिए नहीं। वह एक बैल के रूप में शान्त और ख़ुश रहना चाहता है। जबकि उसके हमउम्र बैल अपने सिर टकराने, आपस में सींगें उलझाने और उछलकर ज़मीन कुरेदने वाले ख़ूँख़ार बैलों की तरह तैयार हुए हैं। वे इस आशा में हैं कि किसी दिन उनकी इसी बैलानगी को देखते हुए उन्हें मैड्रिड की प्रतिष्ठित बुल फाइटिंग के लिए चुना जाएगा। यह स्पेन में बैल जीवन की एक बड़ी उपलब्धि की तरह है।

लेकिन फर्डिनेंड को इसकी परवाह नहीं। वह हृष्ट-पुष्ट, तगड़ा और भरपूर बैल होने के बावजूद बुल फाइटिंग के लिए चुने जाने की कोई आकांक्षा नहीं रखता। पर हम अपने चारों तरफ़ क्या देखते हैं? नर्सरी की उम्र से ही बच्चों पर एक्स्ट्रा कैरिकुलर एक्टिविटी का बोझ लाद दिया जाता है। मसलन, स्केटिंग, स्विमिंग, कराटे, गिटार या सिंथेसाइज़र, या फिर फ्रेंच या जर्मन भाषा सीखना। वह भी बच्चों की पसन्द या रुझान से नहीं, बल्कि अभिभावकों की महत्त्वाकांक्षा से। आरम्भिक स्कूल के दिनों से ही उसे कुछ बनाने के लिए सब उसपर दबाव बनाते हैं। बाज़ार ने तो इस मौक़े को ख़ूब भुनाया है।

ऐसे बहुत-से बच्चे हैं जो गणित, रसायनशास्त्र या अँग्रेज़ी विषय के साथ सहज नहीं हैं। उस विषय का ख़ौफ़ उन्हें असहज करता है। वे ख़ुश नहीं हैं। पर वे पूरी स्कूली शिक्षा में उस विषय को जबरन ढोने, और नाख़ुश रहते हुए भी निभाने को मजबूर हैं। वे बाक़ी सहपाठियों से अलग-थलग होकर पढ़ने और बढ़ने, अभिभावकों या शिक्षकों से अपने मन की बात कह पाने का साहस और निर्णय नहीं कर पाते। इस तरह के निर्णयों में अभिभावकों का सपोर्ट और स्कूल का खुलापन न होने के कारण बड़ी तादाद में किशोर उम्र के लड़के-लड़कियाँ अवसाद, तनाव और चिन्ता व नैराश्य जैसी मानसिक उलझनों का शिकार हो रहे हैं।

कहानी में फर्डिनेंड ख़ुश रहकर अपनी तरह से जीना चाहता है। यह अपनी तरह से जीना इतना मुश्किल क्यों बना दिया गया है? स्कूल बच्चों को उनकी पसन्द के अनुरूप गायक, रंगकर्मी, चित्रकार, कवि या शायर बनकर जीने के लिए तैयार कर पाने में क्यों असफल हैं?

फर्डिनेंड बनी-बनाई छवि को तोड़ता है। वह अपनी वैसी पहचान बनाता है जिसके साथ वह सबसे ज़्यादा ख़ुश है। उसका व्यक्तित्व ख़ुश, सन्तुष्ट और नैसर्गिक स्वभाव वाला है। वह अपने ऊपर किसी महत्त्वाकांक्षा का बोझ नहीं आने देता। उसमें किसी के जैसा बनने या किसी मुक़ाम पर पहुँचने की होड़ नहीं। बैलानगी का प्रदर्शन न करते हुए भी वह जन्मजात बैल है, लेकिन वह एक अलग हटकर पहचान अर्जित करता है।

मैड्रिड में बुल फाइटिंग के लिए सबसे तगड़े और बलिष्ठ बैल के रूप में चुन लिए जाने के बाद भी वह स्टेडियम में फाइट नहीं करता। पिकाडोर सिपाहियों के उकसाने के बावजूद वह बल प्रयोग नहीं करता। वह कोई प्रदर्शन नहीं करना चाहता। वह लड़ना नहीं चाहता। वह

सिर्फ़ इसलिए क्यों लड़े कि वह एक बलिष्ठ बैल है। उसे मैड्रिड की इस प्रतिष्ठित बुल फाइटिंग रिंग में एक ख़ूँख़ार और लड़ाका बैल होने का तमग़ा नहीं पहनना। वह स्टेडियम की दर्शक दीर्घा में बैठी महिलाओं के बालों में लगे फूलों की फैल रही ख़ुशबू लेना चाहता है। स्टेडियम के बीच शान्त बैठकर अपनी नाक उसी तरफ़ कर वह फूलों की ख़ुशबू से ख़ुश होना चाहता है। अन्ततः थक-हारकर बुल फाइटिंग के आयोजकों को उसे घर वापस भेजना पड़ता है।

फर्डिनेंड, कहानी को अपनी तरह से एक अनूठा और अप्रत्याशित मोड़ देता है, और उसका वैसा अन्त करता है जैसा वह चाहता है। लेखक मुनरो लीफ़ भी पूरी तरह से फर्डिनेंड के साथ हैं। स्कूल, अभिभावक और समाज से भी यह उम्मीद की जाती है कि वह फर्डिनेंड को अपनी तरह से बड़ा होने दें, अपनी तरह का बनने दें, और ख़ुश रहकर जीने में मदद करें।

कहानी की अन्तिम पंक्तियाँ कमाल की हैं। मुनरो लीफ़ लिखते हैं, "मुझे मालूम है कि इस सबके बाद फर्डिनेंड अभी भी चारागाह में पेड़ के नीचे अपनी पसन्दीदा जगह पर बैठा हुआ है, और ख़ामोशी से फूलों की ख़ुशबू ले रहा है। वह वाक़ई में बड़ा ख़ुश है!" यह ख़ुश रहना कितना अहम और ज़रूरी है! अपनी तरह का बन पाने की ख़ुशी। अपनी तरह से जी पाने की ख़ुशी।

फर्डिनेंड की कहानी न्यूयॉर्क के पेंगविन रेंडम हाउस के ग्रॉसेट एंड डनलप प्रकाशन छाप के माध्यम से 1936 में प्रकाशित हुई। यह मूलतः अँग्रेज़ी में है। लेखक मुनरो लीफ़ और चित्रकार रॉबर्ट लॉसन को इसके रचनाकार होने का श्रेय हासिल है। कहानी बहुत छोटी लेकिन बेहद दमदार है। रॉबर्ट लॉसन के बनाए ब्लैक एंड व्हाइट चित्र बेहद सजीव और एक्सप्रेसिव हैं। नब्बे के दशक में भारत ज्ञान विज्ञान समिति ने जन वाचन आन्दोलन के तहत इस किताब का हिन्दी अनुवाद कराकर प्रकाशित किया था। अरविन्द गुप्ता ने इसका हिन्दी अनुवाद किया। हिन्दी में तो यह किताब आउट ऑफ़ प्रिंट है, लेकिन इसे अरविन्द गुप्ता बुक्स के ऑनलाइन आर्काइव में जाकर देखा जा सकता है।

अनिल सिंह पिछले 20 बरसों से भी अधिक समय से सामाजिक क्षेत्र में सक्रिय हैं। गए 15 सालों से प्राथमिक शिक्षा ही उनका प्रमुख कार्यक्षेत्र है। सात सालों तक भोपाल में वैकल्पिक स्कूल के मॉडेल आनन्द निकेतन से जुड़े रहे और वहाँ भाषा व सामाजिक विज्ञान शिक्षण का काम किया। वर्तमान में पराग के लाइब्रेरी एजुकेटर कोर्स में बतौर फ़ैकल्टी जुड़े हुए हैं।

सम्पर्क : bihuanandanil@gmail.com

हम नईं बनात रोटी...

सुमन पटेल

हमारे समाज में बराबरी की बात होती है। कहा भी जाता है कि लड़के और लड़कियाँ बराबर हैं, लेकिन आज भी यह ग़ैर-बराबरी मौजूद है। इस विषय पर कक्षा 3, 4 और 5 के बच्चों के साथ हुई बातचीत में बच्चों ने उनके साथ हुए वाक़यात को प्रस्तुत किया। यह वाक़यात दर्शाते हैं कि लड़कियों और लड़कों की बीच यह ग़ैर-बराबरी कहाँ और किस रूप में दिखाई पड़ती है। बच्चों द्वारा प्रस्तुत यह उदाहरण दर्शाते हैं कि इस मसले पर स्कूल में, कक्षा में बातचीत बेहद ज़रूरी है। -सं.

मैं बच्चों का आकलन करने के लिए एक स्कूल गई थी। मुझे कक्षा तीसरी के बच्चों का हिन्दी विषय में आकलन करना था। बच्चों का आकलन करने के बाद मैंने एक बच्ची को बुलाया, और आकलन टूल के पहले ही सवाल, जिसमें एक फल की दुकान का चित्र दिया गया था, पर बातचीत की। बच्ची इस चित्र को देखकर एक-एक कर केवल कुछ चीज़ों के ही नाम बता रही थी। जैसे– तरबूज, अम्मा, लड़की, कौआ, आदि। मुझे लगा कि वह समझ नहीं पाई है। मैंने हिंट देने के लिए उससे पूछा, "आप मम्मी के साथ बाज़ार जाती हो?" उसने कहा, "नहीं।" मैंने फिर उससे सवाल किया, "आपकी मम्मी बाज़ार जाती हैं घर के कुछ सामान लाने के लिए?" वह बोली, "नहीं।" मैंने फिर पूछा, "फिर आपके घर में बाज़ार से सामान कौन लाता है?" उसने कहा, "पापा लाते हैं।" मैंने फिर पूछा, "कपड़े और चप्पल भी पापा ही लाते हैं?" वह बोली, "बाज़ार का सारा काम पापा ही करते हैं। मम्मी खाना बनाती हैं और खेत जाती हैं।" मैंने बात को आगे बढ़ाते हुए बच्ची से पूछा, "आपके घर में कौन-कौन है?" बच्ची ने बताया, "मम्मी-पापा, भैया, दादी, चाचा।" मैंने पूछा, "घर में कौन-कौन लोग क्या-क्या करते हैं?" बच्ची ने बताया, "पापा काम करने जाते हैं, मम्मी खेत में काम करने जाती हैं।" इस बात से मेरी जिज्ञासा बढ़ी तब मैंने सभी बच्चों से इस सन्दर्भ में बातचीत की। सभी बच्चों ने अपने पापा और मम्मी के काम के बारे में बताया। उनकी बातें सुनकर मुझे समझ आया कि बच्चे समझते हैं कि कुछ काम मम्मी के लिए तय हैं और कुछ पापा

के लिए। मुझे लगा कि बच्चों के साथ इसपर और बातचीत करनी चाहिए। इसलिए शिक्षिका के साथ मिलकर इसकी योजना बनाई।

हमने दूसरे दिन कक्षा 3, 4 और 5 के बच्चों के साथ एक गतिविधि की। सबसे पहले कक्षा के लड़के-लड़कियों से कहा कि 15 मिनट तक वे जो खेल खेलना चाहते हैं खेल सकते हैं। लेकिन शर्त यह है कि लड़कियाँ कक्षा के अन्दर खेलेंगी, और लड़के कक्षा के बाहर। सारे लड़के उठकर बाहर चले गए। तभी कक्षा 3 की एक और कक्षा 4 व 5 की दो लड़कियों ने सवाल किया, "आपने हमें बाहर खेलने क्यों नहीं जाने दिया?" उनके सवाल करते ही दूसरी लड़कियों का ध्यान भी इस तरफ़ गया, और वह भी पूछने लगीं कि उन्हें खेलने के लिए बाहर क्यों नहीं भेजा। मैंने कहा, "हम इसपर थोड़ी देर बाद बात करेंगे।"

15 मिनट बाद लड़के आए। उनसे पूछा, "कैसा लगा खेलकर?" बच्चे बोले, "बहुत अच्छा लगा।" लड़कियाँ कक्षा में ही थीं। अब बच्चों को यूनिसेफ़ द्वारा बनाई गई *मीना* सीरीज़ का एक वीडियो 'आम का बँटवारा' (https://youtu.be/rsZrJmCXd94?feature=shared) दिखाया। यह 12.56 मिनट का वीडियो था। इसमें मीना का भाई, मीना के द्वारा उसके घर में किए जा रहे काम को कम आँकता है। फिर एक पूरे दिन के लिए उनके कामों का बँटवारा हो जाता है। मीना केवल गाय चराने का काम करती है, और उसके भाई को घर का झाड़ू, पोंछा, बर्तन,

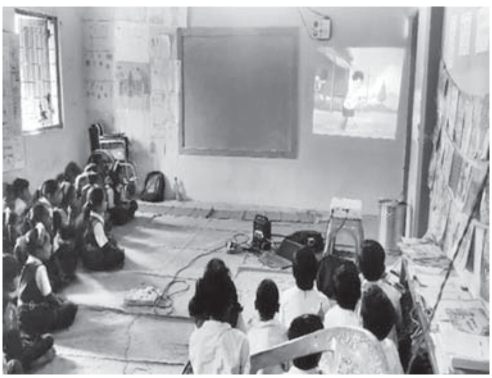

कपड़े, पानी भरना, गाय के रहने के स्थान को साफ़ करना, आदि काम करने पड़ते हैं।

वीडियो दिखाने के बाद मैंने बच्चों से बातचीत की। मेरे शुरूआती सवाल थे, "कहानी में क्या देखा? वह किसके बारे में थी?" कुछ बच्चों ने बताया कि उसमें गाय देखी, जंगल देखा, घर देखा, वहीं कुछ ने बताया कि मीना, उसकी दादी और उसके भाई को काम करते देखा। पर 2 बच्चों ने बताया कि कहानी में दिखाया गया है कि जब कोई लड़का, लड़की का काम करता है, उसे इस काम को करने में दिक़्क़त आती है। एक और बच्चे ने जोड़ा कि हमें लड़कियों या घर के काम को कम नहीं आँकना चाहिए।

मैंने बच्चों से अगला सवाल किया, "कुछ काम आपको इसलिए करने दिए जाते हैं कि आप लड़का हो या लड़की। बताओ, वह कौन-से काम हैं?" मैंने एक-एक बच्चे से पूछना शुरू किया।

एक बच्चे ने बताया (पूरी बातचीत स्थानीय भाषा बुन्देलखण्डी में हुई थी), "मैं रोज़ चूल्हे के पास बैठकर मम्मी से बातें करता था, और

मम्मी खाना भी बनाती जाती थीं। एक दिन मम्मी गाय-भैंस के यहाँ धुआँ कर रही थीं जिससे वह घर आने में लेट हो गईं। मुझे लगा, जब तक मम्मी आएँगी तब तक मैं चूल्हे में आग जला देता हूँ, मम्मी सीधे सब्ज़ी बनाने लगेंगी। मैंने चूल्हे में आग जला दी और वहाँ बैठकर आग में हाथ सेंकने लगा। दादी ने बाहर से धुआँ देखा तो वह अन्दर आईं और पूछा कि चूल्हा किसने जलाया। तब मैंने बोला कि मैंने जलाया। मुझे लगा दादी ख़ुश होंगी। पर वह मुझपर बड़े ज़ोर से चिल्लाईं कि तुम लड़कियों के काम सीख रहे हो। रोज़ घर की बहू के जैसे चूल्हे के पास बैठ जाते हो, और अब चूल्हा भी जलाने लगे। यही सीख रहे हो तुम! मैं तुम्हारी मम्मी को भी डाँटूँगी जो अपने बेटे को रोज़ घर के अन्दर बैठाकर चूल्हा जलाना सिखा रही है। फिर दादी मम्मी पर चिल्लाईं, और मम्मी मुझपर। मुझे बहुत बुरा लगा। उस दिन से जब भी मैं मम्मी के पास बैठने जाता हूँ, मम्मी कहती हैं, 'बाहर जाकर खेलो या टीवी देख लो'।"

एक दूसरे बच्चे ने बताया, "मैंने एक दिन आँगन में झाड़ू लगा दी थी। इसपर मम्मी ग़ुस्सा होकर बोलीं कि यह लड़कियों के काम क्यों कर

रहे हो। दीदी से बोल देते, वह लगा देती। अभी कोई देखेगा तो क्या सोचेगा कि इनकी मम्मी लड़के से झाड़ू लगवाती है।"

एक बच्ची ने बताया, "रोज़ शाम को भैया मैच खेलने जाता है तो उसके साथ कभी-कभी मैं भी खेलने चली जाती हूँ। एक दिन गाँव के एक जन ने भैया और उसके दोस्तों के साथ मुझे भी गेंद खेलते देखा। वो ग़ुस्सा होने लगे कि लड़कियों को लड़कों के खेल क्यों खेलने दे रहे हो, अगर उसके मुँह में गेंद लग गई तो उसकी शादी तक नहीं होगी और उसके माता-पिता को बहुत परेशानी आएगी।"

एक बच्चे ने बताया, "जब हम क्रिकेट खेलते हैं तो मोहल्ले की बड़ी दीदियाँ आ जाती हैं, और डाँटकर हमारा बल्ला ले लेती हैं। वे झूठ-मूठ की गेंद फेंक कर क्रिकेट खेलते हुए रील बनाती हैं, और यहाँ-वहाँ देखती हैं कि कोई उन्हें देख तो नहीं रहा है। एक दिन मैं उनमें से एक दीदी के घर चला गया, और उनकी मम्मी एवं भैया से कहा, 'अपनी बिन्ना को रोक लेना। हम क्रिकेट खेलने जाते हैं तो वो

रोज़-रोज़ वहाँ आ जाती हैं, हमारे गेंद-बल्ला लेकर क्रिकेट खेलती हैं, और फ़ोटो खींचती हैं।' फिर उनकी मम्मी, दीदी पर चिल्लाने लगीं और कहने लगीं, 'हमसे कहके जाती हो कि मन्दिर में दिया रखने जा रही हो, और वहाँ जाके लड़कों के जैसे गेंद-बल्ला खेलने लग जाती हो।' उस वक़्त मुझे भी उनका दीदी को डाँटना बुरा लगा।"

बच्चों के अनुभव सुनने के बाद मैंने एक पुरुष शिक्षक को बुलाया, और उनसे पूछा, "सुबह से आप क्या करके आए हैं, ज़रा बताइए?" सर ने बताया, "नहाया, खाना बनाया और स्कूल के लिए निकल आया।" मैंने पूछा, "रोटी भी बनाई थी?" उन्होंने कहा, "हाँ।" मैंने बच्चों से पूछा, "रोटी कौन-कौन बना लेता है?" लगभग सभी बच्चियों के हाथ उठे। साथ ही 2 लड़कों ने भी हाथ उठाए। मैंने लड़कों से पूछा, "तुमने कैसे सीखा रोटी बनाना?" उनमें से एक बच्चा बोला, "मम्मी की तबीयत ख़राब हुई थी तब मम्मी ने

सिखाया था। उन्होंने कहा था कि रोटी बनाना सीख लोगे तो भूखे तो नहीं रहोगे। मैं पोहा और रोटी-सब्ज़ी बना लेता हूँ।" फिर मैंने दूसरे बच्चे से पूछा, "तुमने कैसे सीखा?" उसने बताया, "मेरी दीदी बहुत ख़तरनाक हैं। वो कोई भी काम अकेले नहीं करती हैं। वो कोई काम तभी करेंगी जब मैं भी उसे करूँगा। अगर वो बर्तन माँजती हैं तो मुझे वे धोने पड़ते हैं, वो रोटी बेलती हैं तो मुझे उन्हें सेंकना पड़ता है। अगर मैं नहीं करूँ तो वो भी नहीं करतीं। इसलिए मम्मी जब कोई काम कहती हैं तो मैं पहले ही चुपचाप करने लगता हूँ।" मैंने पूछा, "क्या करती हैं तुम्हारी दीदी?" उसने बताया, "वो 11वीं में पढ़ती हैं, और भोपाल में रहती हैं।" इन दोनों बच्चों ने एक तीसरे बच्चे की तरफ़ इशारा करते हुए कहा, "मैडम, यह भी रोटी बना लेता है।" जैसे ही सबने उस बच्चे की तरफ़ देखा, वह खड़ा होकर उन बच्चों को मारने लगा और रोने लगा। उसने कहा, "मैडम, हम नहीं बनाते हैं रोटी (हम नईं बनात रोटी...)। यह झूठ बोल रहे हैं। हम नहीं करते लड़कियों के काम।" इसके बाद वह बहुत ज़ोर से रोने लगा। मैंने और शिक्षिका ने एक दूसरे की तरफ़ देखा, और उसे चुप कराया।

लड़कों और लड़कियों से बार-बार कहा जाता है कि यह तुम्हारा काम है, यह तुम्हारा काम नहीं है। यह प्रक्रिया उनके बड़े होने तक चलती रहती है। बाद में जब उनको इन सबकी आदत पड़ जाती है, फिर कहा जाता है कि एक दूसरे के प्रति सहयोग का भाव रखना चाहिए। अब यह सहयोग एक दिन में कैसे आ पाएगा जबकि उस सहयोग की पूर्व में तैयारी ही नहीं हुई होती है।

मैंने यही प्रक्रिया लड़कियों के एक स्कूल में भी अपनाई। यहाँ सभी अनुभव लड़कियों से जुड़े ही आ रहे थे। पहले के स्कूल में लड़के और लड़कियाँ दोनों एक दूसरे के अनुभव सुन रहे थे, और समझ रहे थे कि घर वालों द्वारा ऐसी बातें सिर्फ़ लड़कियों या सिर्फ़ लड़कों को नहीं बोली जाती हैं। मैं चाहती थी कि लड़कियों को लड़कों

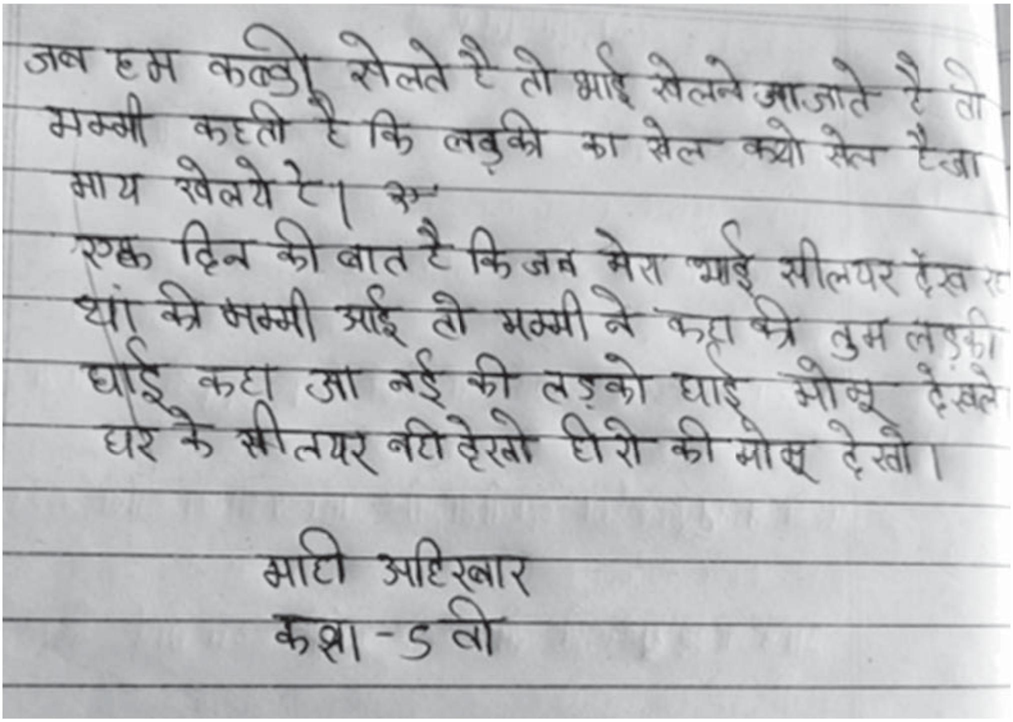
जब हम कब्डी खेलते है तो भाई खेलने आ जाते है तो
मम्मी कहती है कि लड़कि का खेल क्यो खेल रहे हो
भाय खेलये है।
एक दिन की बात है कि जब मेरा भाई सीलयर देख रहा
थां कि मम्मी आई तो मम्मी ने कहा कि तुम लड़की
घाई कहा आ गई की लड़को घाई मोसू देखले
घर के सीलयर नहीं देखो हीरो की मोसू देखो।

माही अहिरवार
कक्षा-5वी

के अनुभव भी पता चलें। इसलिए मैंने उनसे अपने भाई के अनुभव बताने को कहा। लड़कियों ने अपने भाइयों के अनुभव भी बताए। एक बच्ची ने बताया, "मम्मी और मैं रोज़ रात में 'अनुपमा' सीरियल देखते हैं। एक दिन वही सीरियल दिन में मेरा भाई देखने लगा। मम्मी ने उससे कहा, 'क्या लड़कियों के जैसे सीरियल देख रहे हो'।"

यह सभी कक्षा 3 से 5 के बच्चे हैं। छोटी उम्र में ही लड़के और लड़की व उनके कामों के बीच विभेदीकरण किया जा रहा है। इस प्रकार, लड़के और लड़की के बीच सहयोगात्मक भाव से इतर एक गहरी खाई खोदी जा रही है। अब सवाल यह है कि हम इस अन्तर को कम कैसे करें, और कैसे बच्चों के बीच समानता स्थापित करें? इस सवाल का एक ही जवाब है, स्कूल। स्कूल के माध्यम से ही हम इस अन्तर को दूर करने का प्रयास कर सकते हैं। सबसे पहले यह ज़रूरी है कि कक्षा 1 से 5 तक के बच्चों को उनके जेंडर के आधार पर अलग-अलग करके नहीं बैठाएँ। लड़कों और लड़कियों के बीच में अन्तर की शुरुआत यहीं से हो जाती है। दूसरा, प्रार्थना में भी लड़कों और लड़कियों की अलग-अलग क़तार लगाने से बचना चाहिए। मैंने एक शिक्षक से पूछा, "प्रार्थना के समय लड़कों और लड़कियों की क़तार अलग-अलग क्यों होती है?" इसपर उनका तर्क था, "प्रार्थना के बाद लड़के तेज़ी से भागकर कक्षा की तरफ़ जाते हैं, और लड़कियाँ आराम से चलकर, इसलिए लड़कों और लड़कियों की अलग-अलग क़तार बनवाते हैं।" इसपर मैंने उनसे कहा, "आपको शायद लड़कों से बात करने की ज़रूरत है। इस समस्या का समाधान यह तो बिलकुल नहीं है।" और तीसरी बात कि स्कूल के लंच के समय यह पूर्व निर्धारित न हो कि लड़के कौन-सा खेल खेलेंगे और लड़कियाँ कौन-सा।

फिर जब हम स्कूल में कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम करते हैं, उसमें भी बच्चों के लिए काम का समान रूप से बँटवारा होना चाहिए। प्राय: किसी भी कार्यक्रम में स्कूल को सजाने,

जिसमें रंगोली, आदि शामिल होती है, का काम लड़कियों को मिलता है, वहीं कहीं कुछ ऊपर बाँधना हो या फ़र्नीचर रखना हो तो यह काम लड़के करते हैं। क्या लड़के रंगोली नहीं बना सकते, और क्या लड़कियाँ फ़र्नीचर नहीं रख सकतीं? घर में शायद यह अवसर उन्हें न के बराबर मिलें, पर इसकी शुरुआत हम स्कूल से कर सकते हैं। इससे बच्चों की आपस में मिलकर काम करने की झिझक दूर होगी, और बाद में भी वह साथ में काम कर सकेंगे।

एक लेखिका ने कहा था, "स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।" लेकिन पुरुष भी पैदा नहीं होते, बनाए जाते हैं। स्त्री और पुरुष दोनों का ही समाजीकरण समाज में रहकर और समाज के लोगों द्वारा ही होता है। हमने ऊपर कई उदाहरण देखें, जहाँ एक बच्चा रोटी बनाने का नाम सुनते ही रोने लगता है, और दूसरा वह बच्चा है जिसको पता है कि दीदी तब तक काम नहीं करेंगी जब तक वह उनका हाथ नहीं बँटाएगा, वह उस काम को करने के लिए पहले से तैयार है। अब उसे इसमें कुछ अलग नहीं लगता। वह सारे काम को काम की तरह ही देखता है। अतः हमें अपने स्कूलों में यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि हमारे स्कूल का हर बच्चा काम को काम की तरह देखे, न कि लड़कियों और लड़कों के काम का चश्मा पहनकर।

सुमन पटेल ने डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय सागर से इतिहास विषय में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। स्कूल में शिक्षकों के साथ बाल साहित्य को लेकर काम करने में उनकी विशेष रुचि है। बच्चों के लिए लघु कहानियाँ और कविताएँ लिखने के साथ-साथ बुन्देली भाषा में शिक्षकों और बच्चों के साथ कहानी सुनाने की विधा को लेकर लगातार प्रयास कर रही हैं। वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन सागर, मध्य प्रदेश में टीचर एजुकेटर के रूप में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : suman.patel@azimpremjifoundation.org

बच्चों के मन से मस्तिष्क तक

ज़ीनत

डर का माहौल किसी भी बच्चे या इंसान के सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर नकारात्मक असर डालता है। इसके बावजूद, अकसर वयस्क सोचते हैं कि बच्चे के सही विकास के लिए डर का माहौल होना ज़रूरी है। लेख इस बात को ख़ारिज करता है, और कहता है कि कक्षा में परस्पर बराबरी, विश्वास और सम्मान का माहौल होना चाहिए। यह उन व्यवहारों की भी बात करता है जो ज़ाहिर तो नहीं होते, लेकिन डर का माहौल ज़रूर निर्मित करते हैं। -सं.

पृष्ठभूमि

यह संसार विचारों से परिपूर्ण है और रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में न जाने कितने ही लोगों के विचार आपस में टकराते रहते हैं। इन विचारों की ख़ास बात यह होती है कि उसे ग्रहण करने वाले इंसान को वही विचार सर्वप्रिय लगते हैं जो शायद दूसरों को न लगते हों। मेरी आगे आने वाली बात से आप इत्तेफ़ाक़ रख भी सकते हैं और नहीं भी। कुछ दिन पहले जेंडर समानता की कार्यशाला में मेरी मुलाक़ात एक स्कूल हेडमास्टर से हुई, और मुझे उनको जानने का अवसर मिला। हमारी बात कक्षा को केन्द्र में रखकर हो रही थी। इस बातचीत में उनका मत आया, "कक्षा में डर का माहौल बनाकर रखना बहुत ज़रूरी है वरना बच्चे पढ़ेंगे कैसे? अब सरकार न जाने क्या-क्या नियम ले आती है। बच्चे को एक थप्पड़ मारो तुरन्त याद हो जाता है।" शायद वह सिर्फ़ वही कह रही थीं जो उन्होंने पिछले 20-25 सालों में जिया है और शायद हमने भी। इसके बाद, उनके परिवार के बारे में बात हुई जिसमें उनके बच्चों के बारे में बात शामिल थी। काफ़ी लम्बी बात के बाद जब यह सवाल आया, "क्या कभी आपके बच्चे को विद्यालय में मार पड़ी है?" इसपर उनका जवाब था, "ऐसे कैसे कोई शिक्षक मार देगा?" इन शिक्षिका का अपने ख़ुद के बच्चे के सम्बन्ध में स्कूल में पिटाई के बारे में दृष्टिकोण अलग था।

कक्षा में शिक्षण करते वक़्त शायद सभी शिक्षकों के सामने एक प्रश्न यह होता है कि कक्षा में अनुशासन कैसे बनाकर रखा जाए। इसका एक सीधा उत्तर यह हो सकता है कि बच्चों को थोड़ा डराकर रखना चाहिए। यदि हम इस बात को पलट दें और सोचें कि बच्चों से भावनात्मक जुड़ाव बना लिया जाए, और बच्चों व शिक्षक के बीच पारस्परिक सम्मान के माहौल में कक्षा का संचालन हो तब क्या कक्षा में व्यवस्थित कार्य नहीं होगा। यह वैसा सुई पटक, हिलना-डुलना रहित अनुशासन तो नहीं होगा, लेकिन ऐसी स्थिति भी ज़रूर बनेगी जिसमें बच्चे स्वतंत्र रूप से पढ़ सकेंगे, और शिक्षक खुले एवं व्यवस्थित रूप से पढ़ा सकेंगे। इस सन्दर्भ में यह सोचना आवश्यक है कि आख़िर यह भावनात्मक जुड़ाव है क्या, और परस्पर सम्मान का यह माहौल बनेगा कैसे? हालाँकि, कुछ लोग यह सवाल भी कर सकते

चित्र : प्रशांत सोनी

भावनात्मक जुड़ाव न हो तो शिक्षक और बच्चों के लिए चुनौतियाँ

विद्यालय में जब शिक्षक और बच्चे के बीच भावनात्मक जुड़ाव नहीं होता तब बच्चे के लिए डर का माहौल बन ही जाता है। डर के माहौल से संसाधन और सुविधाएँ नहीं बचा सकतीं। इसे फ़ारूक़ सरवर की कहानी ‘भेड़िया’ से समझते हैं। इस कहानी में एक शख़्स है जो एक दरख़्त (पेड़) पर है। पेड़ पर उसके पास दुनिया की सारी सुख-सुविधाएँ मौजूद हैं, पर जो उसके पास नहीं है वो है आज़ादी। वो खाने के बारे में सोचता है तो उसके सामने खाना आ जाता है, सोने के बारे में सोचता है तो बिस्तर आ जाता है। लेकिन जब वह दरख़्त से नीचे उतरने के बारे में सोचता है, एक भेड़िया उसे खा जाने के लिए तैयार बैठा है। उस भेड़िए से उस शख़्स को बहुत डर लगता है। डर के कारण वह धीरे-धीरे अपना आत्मविश्वास और ख़ुद पर भरोसा खो बैठता है। इसी तरह, विद्यालय में भी शिक्षक और बच्चों के बीच जब भावनात्मक जुड़ाव नहीं होता तब डर पनपता है। भले ही विद्यालय में सारी सुख-सुविधाएँ मौजूद हों (जैसे– बढ़िया इमारत, बैठने की अच्छी व्यवस्था, लाइब्रेरी, इत्यादि), लेकिन यदि बच्चे अपने शिक्षक से बात करने और सवाल पूछने से घबराते हों तब यह सभी चीज़ें निरर्थक हो जाती हैं।

बच्चों के मन में यह डर कैसे उपजता है? इसपर बात करना ज़रूरी है क्योंकि इस डर के बनने के बहुत से कारण न तो हम जान पाते हैं न ही समझ पाते हैं। बच्चे आख़िर क्यों सवाल करने से डरते हैं? इसे एक उदाहरण से समझते हैं। जब शिक्षक बच्चों को मारते हैं, वह बच्चों के अन्दर डर का भाव पैदा करते हैं। जब मेरे विद्यालय में गणित के शिक्षक दूसरे बच्चों पर छड़ी बरसाते थे, मैं बहुत डर जाती थी और कभी उनके सामने ही नहीं आती थी। इस कारण

हैं कि क्या यह अनुशासन है। लेकिन स्पष्ट है कि *एनसीएफ़ 2023* सहित सभी नीति दस्तावेज़ कक्षा में ऐसे माहौल का निर्माण करने का आग्रह करते आ रहे हैं।

भावनात्मक जुड़ाव को कैसे समझें ?

भावनात्मक जुड़ाव के लिए सहानुभूति और समानुभूति का बोध चाहिए। किसी व्यक्ति के दु:ख को समझ पाना सहानुभूति है, वहीं किसी के दु:ख में ख़ुद को वैसा ही महसूस कर पाना समानुभूति है। ज़्यादातर विद्यालयों और कक्षाओं में इन दोनों का ही अभाव दिखता है। अगर शिक्षक बच्चों की चुनौतियों को उनके स्तर पर आकर समझें, उनके साथ मिलकर निदान ढूँढ़ सकें, और बच्चों को अपनी चुनौतियाँ समझा सकें तो साझा प्रयास से कक्षा बढ़िया चल सकती है।

में कभी किसी मुद्दे पर अपनी बात उन तक पहुँचा ही नहीं पाई। नतीजतन, विद्यालयी दिनों में न तो मैं कभी गणित विषय को समझ पाई न ही अच्छी वक्ता बन सकी। इससे यह स्पष्ट है कि केवल ख़ुद मार खाने से नहीं बल्कि अपने सहपाठियों को पिटता देखकर भी बच्चों में डर का भाव पैदा हो जाता है। कहानी में भेड़िया उस शख़्स को देखकर बार-बार गुर्राता था तो वह शख़्स और डर जाता था, उसी प्रकार से शिक्षक भी जाने-अनजाने इतनी सारी बातें कर जाते हैं कि उनका कितना और क्या असर बच्चे के मन-मस्तिष्क पर पड़ता है, इसका उन्हें अन्दाज़ा ही नहीं रहता है।

एक विद्यालय में बच्चों के साथ भाषा पर काम करने के दौरान मैंने बच्चों से पूछा कि किस-किस को किताब पढ़ना आता है। कई बच्चों ने हाथ उठाया। उन बच्चों में से दो बच्चे बोल पड़े, "मैडम, इसको किताब पढ़ना न आवे, ये नालायक़ है। मनने आवे, मैं होशियार हूँ।" और शिक्षक से बात करने पर भी यही जवाब मिला कि जितने होशियार बच्चे हैं उनको पढ़ना आता है, और जो नालायक़ है उनको नहीं आता। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह बात बच्चों को भी मालूम होती है कि कौन बच्चे पढ़ सकते है और कौन नहीं। धीरे-धीरे बच्चे ख़ुद भी यह बात मान लेते हैं कि वह नालायक़ हैं, और शिक्षक के सामने वे कभी भी अपनी बात नहीं रखते क्योंकि उनको उपाधि दे दी गई है कि वह जो बोलेंगे वो ग़लत बोलेंगे।

इस प्रक्रिया से केवल बच्चों का ही नहीं वरन् शिक्षक का भी नुक़सान होता है। यदि बच्चों के लिए सोचें तो वह डरते तो हैं ही, सवाल भी नहीं पूछते, अपनी बात नहीं रखते, चुपचाप रहते हैं, उनके व्यक्तित्व का खिलकर निर्माण नहीं होता, और उनमें आत्मविश्वास की कमी रहती है। वहीं शिक्षक भी बच्चे को जान-समझ नहीं पाता, न ही उसकी समस्याओं का पता लगा पाता है। बच्चे उससे इतना डरते हैं कि वह पढ़ा हुआ हर एक पाठ भूल जाते हैं क्योंकि जो याद रह जाता है वह डर और डाँट होती है। इस प्रकार से, शिक्षकों और सभी वयस्कों को बच्चों के साथ अपनी अन्त:क्रिया की प्रक्रिया पर ग़ौर करने की ज़रूरत है। जिन बच्चों को वह होशियार कहते हैं उनके साथ वह कैसा व्यवहार करते हैं, और जिनको वह नालायक़ कहते हैं उनके साथ कैसा? साथ ही, ऐसी उपाधि देना कितना सही है, और फिर इसका बच्चों पर क्या असर होता है?

भावनात्मक जुड़ाव और फ़ायदे

एक विद्यालय में शिक्षिका पढ़ाने के बाद अभ्यास करने के समय हरेक बच्चे को ग़ौर से सुन रही थीं और उनके साथ ज़मीन पर बैठकर काम करवा रही थीं। बच्चे उनके साथ बहुत सहज नज़र आ रहे थे। वे बार-बार पूछ रहे थे, "मैडम, क्या मैंने यह सही किया है?" और

चित्र : प्रशांत सोनी

मैडम उनका जवाब दे रही थीं। लेकिन इस बीच कुछ काम की वजह से उनको थोड़ी देर बाहर जाना पड़ा। इस बीच बच्चे शोर करने लगे। मैडम वापस आईं और थोड़ी तेज़ आवाज़ में बोलीं, "कोई आया है न, थोड़ी देर ध्यान नहीं दे सकते! आप सब समझदार हो न फिर ऐसा क्यों कर रहे हो।" इसके बाद भी बच्चे डरे हुए नहीं नज़र आ रहे थे बल्कि वे मैडम की बात मानते दिखे, और अपना काम करने लगे। इसका कारण शायद समानुभूति था। इस कक्षा में शिक्षक और बच्चे दोनों ही एक दूसरे को समझते हैं। सवाल यह उठता है कि यह समानुभूति कैसे बनी होगी। मुझे लगता है, इसकी शुरुआत वयस्क के व्यवहार से होती है। यदि शिक्षक और दूसरे वयस्क ही सहानुभूति व समानुभूति की सही समझ के उदाहरण व्यवहार में नहीं रखेंगे तो बच्चों में इनका अभाव होना स्वाभाविक है। इसलिए शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह अपनी प्रक्रियाओं को ऐसा बनाए जिनमें समानुभूति नज़र आए। ऐसे में बच्चे आपसे डरेंगे नहीं। वे अपनी बात रखेंगे, आपकी बात समझेंगे, आपके पाठों को अच्छे से याद रखेंगे, आदि।

भावनात्मक जुड़ाव कैसे बनाया जा सकता है?

हमारे सन्दर्भ में शायद सबसे बड़ा सवाल यही है कि आख़िर यह जुड़ाव कैसे बनेगा। इस जुड़ाव को बनाने या बनाए रखने में दो महत्त्वपूर्ण बातें हैं। पहली बात, कक्षा या उसके बाहर सभी एक दूसरे से सुरक्षित महसूस करते हों। यह सवाल उठ सकता है कि विद्यालय में असुरक्षित महसूस करने जैसा क्या है। ऐसी बहुत-सी चीज़ें होती हैं जिनके प्रति हम सजग नहीं होते। जैसे– बच्चों की विभिन्न ज़रूरतों पर ध्यान न देना, उनकी बातों को अनसुना करना, जाने-अनजाने बच्चों की लेबलिंग करना, आदि। फिर यदि बच्चों को दण्ड देकर बातें समझाई जाएँ तो क्या उन्हें माहौल सुरक्षित लगेगा? और माहौल सुरक्षित नहीं होगा तो भावनात्मक जुड़ाव नहीं बन सकेगा। हम सबके लिए यह समझना ज़रूरी है कि यदि भावनात्मक जुड़ाव होगा तो शायद मारने या दण्ड देने के जो मौक़े बनते प्रतीत होते हैं वे नहीं बनेंगे, और सज़ा की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। बच्चों की बात को महत्त्व देना बहुत ज़रूरी है। कोई बात शिक्षक के लिए भले ही आवश्यक न हो, हो सकता है कि वह बच्चे के लिए बहुत ज़रूरी हो। जब शिक्षक बच्चों की बात को महत्त्व देते हैं तो बच्चे भी शिक्षक की बात को महत्त्व दे रहे होते हैं। और यही चीज़ उन्हें सुरक्षित महसूस करने की तरफ़ ले जा रही होती है। दूसरी बात, एक दूसरे पर विश्वास करना बेहद ज़रूरी है। यदि शिक्षक और बच्चे एक दूसरे पर विश्वास रखते हैं, वे अवश्य ही एक दूसरे के साथ सुरक्षित महसूस करते हैं। इस तरह, उनके बीच एक

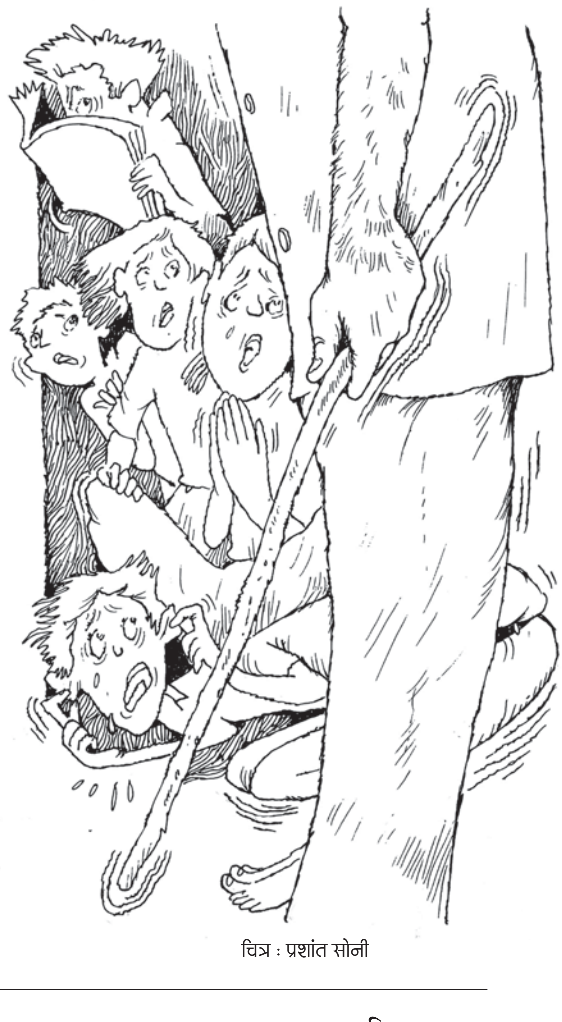

चित्र : प्रशांत सोनी

सकारात्मक भावनात्मक जुड़ाव बनता है। यदि शिक्षक बच्चों की बात पर विश्वास नहीं करते तो अवश्य ही वह बच्चों के साथ शिक्षक होने का भी रिश्ता नहीं रख पाते। और असल में तो शिक्षक और बच्चों के बीच औपचारिक से अधिक भरोसा व रिश्ता होना चाहिए। इसी तरह, कई ऐसी छोटी-छोटी विद्यालय व कक्षागत प्रक्रियाएँ हैं जिनकी पहचान करना आवश्यक है।

भावनात्मक जुड़ाव में सन्तुलन

एक और महत्त्वपूर्ण सवाल यह है कि बच्चों के साथ जुड़ाव किस स्तर का हो। इसमें सन्तुलन बनाना उतना ही आवश्यक है जितना इस जुड़ाव को विकसित करना। यदि शिक्षक भावनात्मक जुड़ाव बनाते हैं, और उसमें स्तर व सन्तुलन नहीं रख पाते हैं तब भी शिक्षक व बच्चों के बीच एक स्वस्थ तालमेल नहीं बैठ पाता है।

बच्चों को समझने और उनसे जुड़ने के लिए बच्चों के साथ बराबरी महसूस करना, और उसे व्यक्त करना बेहद ज़रूरी है। हालाँकि कभी-कभी शिक्षक भी बच्चों के साथ उनके जैसे हो जाते हैं। उन्हें याद रखना चाहिए कि वह एक मार्गदर्शक भी हैं। कई बार देखा गया है कि कुछ शिक्षक बच्चों से इस तरह जुड़ जाते हैं कि वह उनकी किसी बात को ख़ारिज नहीं कर पाते, और कक्षा में सन्तुलन खो बैठते हैं। उदाहरण के लिए, यदि बच्चों का पढ़ने का मन नहीं है और वे रोज़ शिक्षक से ऐसा कह भी देते हैं। यदि शिक्षक रोज़ उनकी इस बात को मान लेते हैं तो यह उचित नहीं है। बच्चे और शिक्षक दोनों के मतों में सन्तुलन होना आवश्यक है। ऐसी स्थितियों में यह फ़ैसला शिक्षक को लेना होगा कि बच्चों के लिए क्या सही है क्या ग़लत, और उनकी कौन-सी बात माननी है कौन-सी नहीं। इस प्रक्रिया में बच्चे और शिक्षक होने में जो एक रेखा है उसे पहचानना बहुत आवश्यक है।

ज़ीनत मूलतः दिल्ली की रहने वाली हैं। इनकी स्कूली शिक्षा सरकारी स्कूल से हुई। इन्होंने अपना बीए (हिन्दी ऑनर्स) और बीएड जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय से और एमए (हिन्दी) इग्नू से किया। इन्होंने 4 साल हिन्दी शिक्षक के रूप में कार्य किया है। ज़ीनत 2022 में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन से जुड़ीं, और राजस्थान के पाली ज़िले में बतौर रिसोर्स पर्सन कार्य कर रही हैं। इन्हें हिन्दी साहित्य पढ़ना बहुत पसन्द है।

सम्पर्क : zeenat@azimpremjifoundation.org

सुबह की सभा : बदलाव की शुरुआत

अंशिका शर्मा

स्कूल में सुबह की सभा क्यों की जाती है; इसका बच्चों और शिक्षकों के लिए क्या महत्त्व है; स्कूलों में सुबह की सभा का स्वरूप कैसा है; और उसमें क्या अर्थपूर्ण बदलाव किए जा सकते हैं? यह लेख इन सभी सवालों पर रोशनी डालता है। -सं.

पृष्ठभूमि

सुबह की सभा एक ऐसा मंच है जिसमें स्कूल के सभी बच्चे और शिक्षक एक साथ होते हैं। *स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2023* कहती है, "असेंबली पूरे स्कूल समुदाय को एक साथ लाती है, और विषय क्षेत्रों की सीमाओं से परे जाकर सामूहिक सीखने व काम की सराहना की सुविधा प्रदान करती है। स्कूल असेंबली एकजुटता की सकारात्मक भावनाओं के साथ दिन की शुरुआत या समाप्ति करने का एक आदर्श तरीक़ा है।" – *NCFSE 2023*, Chapter 2, Section 2.1, subsection 2.1.2, page 563)

सुबह की सभा विद्यार्थियों के शैक्षणिक और व्यवहार सम्बन्धी पहलुओं में भी बहुत योगदान दे सकती है। इसलिए इसे एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखना चाहिए जिसके लिए योजना और दृष्टि की आवश्यकता होती है। स्कूल की सभा में बदलाव की यह कहानी एक स्कूल के शिक्षकों व मेरे द्वारा किए गए साझा प्रयासों के बारे में है। उस समय मैं नियमित रूप से इस प्राथमिक शाला में जा रही थी। मैंने देखा कि इस स्कूल में मॉर्निंग असेंबली में सिर्फ़ प्रार्थना और राष्ट्रगान ही होता है। मेरे मन में मॉर्निंग असेंबली की छवि फ़र्क़ थी। मेरे स्वयं के स्कूल में मॉर्निंग असेंबली के दौरान बहुत-सी गतिविधियाँ होती थीं, और वह हम बच्चों को अच्छी भी लगती थीं। इसी पर सोचते हुए मैंने असेंबली में बदलाव की कोशिश की। यह सब कैसे हो पाया? इसका विवरण इस लेख में प्रस्तुत है।

चित्र : हीरा धुर्वे

बच्चों में आत्मविश्वास आना शुरू हुआ

चित्र : हीरा धुर्वे

इस बदलाव की शुरुआत पहली कक्षा के बच्चों के साथ हुई। पहली कक्षा में बच्चों के साथ मैं बहुत-सी कविताओं और कहानियों पर काम कर रही थी। बच्चों को यह याद भी हो गई थीं। मैंने इन कविताओं और कहानियों को सुनाने के लिए कुछ विद्यार्थियों को कक्षा में ही बुलाकर शुरुआत की। धीरे-धीरे विद्यार्थियों ने पूरी कक्षा के सामने आगे आने और अपनी प्रस्तुति देने के लिए स्वेच्छा से हाथ उठाना शुरू कर दिया। इस प्रक्रिया ने उन्हें आत्मविश्वास और अपनेपन की भावना हासिल करने में मदद की। इससे आख़िरकार उन्हें अपनी कक्षा में सुबह के पाठ का स्वामित्व लेने में मदद मिली। हालाँकि अभी बच्चे कक्षा में ही प्रस्तुति दे रहे थे। अब विद्यालय की सुबह की सभा में प्रस्तुति के लिए उन्हें तैयार करना था, और इस प्रस्तुति की सभा में जगह भी बनानी थी।

कक्षा से विद्यालय तक

स्कूल स्तर पर कुछ भी लागू करने से पहले प्रधानाध्यापक की अनुमति लेना ज़रूरी था। प्रोटोकॉल का पालन करते हुए, मैंने सुबह की सभा के लिए अपनी योजना और डोमेन-विशिष्ट गतिविधियाँ प्रधानाध्यापक के समक्ष प्रस्तुत कीं। ये गतिविधियाँ बच्चों के सर्वांगीण विकास को बढ़ावा देने के लिए डिज़ाइन की गई थीं। उदाहरण के लिए, भाषा विकास के लिए कहानी और कविता सुनाना, सामाजिक और भावनात्मक विकास के लिए गाँव की विभिन्न ख़बरें सुनाना, आदि। प्रधानाध्यापक ने इस क़दम में एक महत्त्वपूर्ण सहायक की भूमिका अदा की, और इस पहल के लिए अनुमति दे दी। फिर मैंने एक दिन पहली कक्षा के एक विद्यार्थी को सुबह की सभा के दौरान कविता प्रस्तुत करने के लिए कहा। वह आगे आया, और उसने अपनी पसन्दीदा कविता, 'Peel Banana' प्रस्तुत की। यह पहली बार था जब सुबह की सभा में सामान्य प्रार्थना और राष्ट्रगान के अलावा कुछ और भी शामिल किया गया। बच्चों और कुछ शिक्षकों को यह बदलाव अच्छा भी लगा। लेकिन स्कूल के एक शिक्षक को यह अच्छा नहीं लगा, और उन्होंने मुझे स्थापित प्रक्रियाओं में हस्तक्षेप न करने की सलाह दी। इसके बाद मैंने शिक्षक के साथ सुबह की सभा के महत्त्व के बारे में बातचीत की। मैंने सभा में की जाने वाली गतिविधियों की एक रूपरेखा तैयार की, और इसे सभी शिक्षकों के साथ साझा किया। इससे बदलाव को सुविधाजनक बनाने में मदद मिली। इन गतिविधियों की सूची इस प्रकार है :

'आज का सुविचार' : इसमें बच्चे अपने मन की बात, घर पर सुनी गई कहावत, आदि को अपनी भाषा में पूरे समूह के सामने प्रस्तुत करते थे। इससे बच्चों में भाषाई विकास के साथ-साथ बोलने का आत्मविश्वास भी विकसित हुआ।

'गाँव की ताज़ा ख़बर' : बच्चे अपने गाँव या आसपास घटित महत्त्वपूर्ण घटनाओं को सुबह की सभा में साझा करने लगे।

इसी प्रकार, अन्य गतिविधियों (जैसे– किताब या किसी फ़िल्म पर चर्चा करना, पपेट्री

(कठपुतली का खेल) करना, कहानी सुनाना, रोलप्ले, कविता गायन, चुटकुले सुनाना, कलात्मक कार्य का प्रस्तुतीकरण, स्कूल से सम्बन्धित निर्देशों को देना, आदि) को भी प्रातःकालीन सभा में शामिल किया गया।

बदलाव की डगर

अब स्कूल की सुबह की सभाओं में अन्य प्रस्तुतियाँ भी होने लगी थीं। समय मिलने पर कक्षा में बच्चों के साथ प्रभावी बातचीत और दोपहर के भोजन के समय अन्य विद्यार्थियों के साथ बातचीत के माध्यम से, मुझे उनकी ज़रूरतों के बारे में बेहतर समझ हो पाई। एक दिन अपूर्व मेरे पास आया और बोला, "दीदी, क्या आप जानती हैं आज क्या हुआ? उस घर में कोई ख़त्म हो गया।"

उस पल, मेरे दिमाग़ में यह ख़्याल आया कि इस तरह की ख़बरें भी सुबह की सभा के दौरान साझा की जा सकती हैं। मैंने अपूर्व से पूछा कि क्या वह इसे प्रस्तुत करने को इच्छुक है। शुरू में तो वह चिन्तित और तनावग्रस्त था, लेकिन शिक्षक से अनुमति मिलने के बाद अपूर्व ने सभा के दौरान स्थानीय समुदाय की ख़बरें साझा कीं।

चित्र : हीरा धुर्वे

अब सुबह की सभा में होने वाली गतिविधियों में बच्चों की भागीदारी बेहतरीन ढंग से हो रही थी। मुझे एहसास हुआ कि अब असेंबली को एक संरचित दिशा में मोड़ने का समय आ गया है।

सुबह की सभाओं का चैनलाइजेशन कैसे हुआ?

जैसे-जैसे सभा में अभ्यास, तुकबन्दी, गीत और स्थानीय समाचार जैसी गतिविधियाँ होने लगीं, यह सुनिश्चित करना आवश्यक हो गया कि प्रत्येक विद्यार्थी को बोलने और प्रदर्शन करने का मौक़ा मिले। सभी विद्यार्थियों को मौक़ा मिल पाए, इसलिए प्रत्येक सोमवार को असेंबली का समय बढ़ाया गया। आगामी सभाओं में कौन-सी गतिविधियाँ होंगी; उन्हें कौन करेगा; और वह किस कक्षा से होंगी; यह तय करने के लिए पूरे स्कूल के विद्यार्थियों की कक्षावार मण्डलियाँ भी बनाई गईं। इस तरह सुबह की सभा में सभी बच्चों को उचित मौक़े मिलने सुनिश्चित हो पाए। इन मण्डलियों ने शिक्षकों के साथ मिलकर यह निर्णय लिया कि प्रत्येक कक्षा से विद्यार्थियों को रोटेशन के आधार पर प्रार्थना, व्यायाम, योग-ध्यान और राष्ट्रगान का नेतृत्व करने देने के मौक़े मिलें। एक साप्ताहिक सारिणी बनाई गई जिसमें यह जानकारी शामिल थी– सभा को कौन-सी कक्षा के व कौन विद्यार्थी संचालित करेंगे; अन्य कक्षा के कौन-से विद्यार्थी प्रस्तुतियाँ देंगे; और इन प्रस्तुतियों के विषय क्या होंगे। चूँकि यह एक मिडिल स्कूल था, इसलिए एक सप्ताह में 6 अलग-अलग कक्षाओं के विद्यार्थी ही सभा संचालित कर पाते थे। उसके बाद अन्य कक्षाओं को दूसरे सप्ताह संचालन की ज़िम्मेदारी

मिलती थी। उदाहरण के लिए, सोमवार को स्कूल असेंबली समूह द्वारा व्यायाम का नेतृत्व किया जाएगा, उसके बाद प्रार्थना और कक्षा 1 के सूरज द्वारा एक कविता पाठ किया जाएगा। मंगलवार को स्कूल असेंबली समूह एक ध्यान सत्र आयोजित करेगा, उसके बाद प्रार्थना और एक स्थानीय पाठ होगा। कक्षा 6 से अपूर्व द्वारा समाचार साझा करने की गतिविधि, और साथ ही कक्षा चार की एक छात्रा द्वारा गीत गायन किया जाएगा।

सभाओं की विषयवस्तु तय करने की ज़िम्मेदारी विद्यार्थियों को सौंपी गई। इस दृष्टिकोण ने बच्चों को अपनी सभाओं का स्वामित्व लेने, और शिक्षक की ग़ैर-मौजूदगी में भी इन गतिविधियों की निरन्तरता सुनिश्चित करने की ज़िम्मेदारी दी। स्वामित्व की इस भावना ने अपनेपन की भावना को बढ़ावा दिया 'विद्यार्थियों का, विद्यार्थियों द्वारा, और विद्यार्थियों के लिए।' इन सभी गतिविधियों का रिकॉर्ड रखा गया।

रिकॉर्ड रखने से इस बात की महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त हुई कि कितने विद्यार्थियों ने सभा में कितनी बार भाग लिया। इससे यह पहचानने में मदद मिली कि किन विद्यार्थियों को अभी तक भाग लेने का अवसर नहीं मिला है, और अगले सप्ताह किसे मौक़ा दिया जाना चाहिए? वर्तमान में स्कूल में असेंबली को और रोचक बनाने का काम चल रहा है। बच्चे अब प्रार्थना में आनन्द के साथ प्रतिभाग करने लगे हैं।

यह भी महसूस किया मैंने कि असेंबली हर कक्षा के विद्यार्थियों को मेरे पास आने, और अपने जीवन व उन गतिविधियों के बारे में अपने विचार साझा करने के लिए प्रोत्साहित करती थी जिनमें वे असेंबली के दौरान भाग लेना चाहते थे। सुबह की सभा जैसी इन छोटी पहलों की बदौलत मैंने हर गुज़रते दिन के साथ बच्चों के आत्मविश्वास में उल्लेखनीय वृद्धि और समग्र सुधार देखा।

अन्त में

शुरुआत में कुछ चुनौतियाँ आईं, लेकिन बदलाव हुआ। इस बदलाव में लगभग 6 महीने लगे। आज स्कूल की सभा में कई बच्चे भाग ले रहे हैं। शिक्षक और बच्चे नई गतिविधियाँ सुझाते हैं, और उन्हें सभा में शामिल भी करते हैं।

अंशिका शर्मा ने डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर किया है। किताबें पढ़ने में उनकी विशेष रुचि है। 2023 में अंशिका सागर में एसोसिएट रिसोर्स पर्सन के रूप में अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ जुड़ीं। वर्तमान में वे सागर ज़िले के राहतगढ़ ब्लॉक में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : anshika.sharma@azimpremjifoundation.org

मापन सिखाने की रोचक यात्रा

सुभाष चन्द सैनी

गणित पढ़ाने का एक उद्देश्य बच्चों को उन क्षमताओं के बारे में समझ के साथ कुशल बनाना है जिनका इस्तेमाल रोज़ाना के जीवन में होता है। मापन इनमें से एक है। इस लेख में पाँचवीं कक्षा के बच्चों के साथ मापन की अवधारणा पर किए गए काम का लेखाजोखा है। इन गतिविधियों और संवाद की मदद से बच्चे न सिर्फ़ मापन के बारे में अपनी समझ बना सके, बल्कि उनके गणितीय ढंग से सोचने व तर्क करने जैसे साधनों के विकसित होने की सम्भावना बनी। -सं.

प्राथमिक कक्षाओं के लिए मापन एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। बच्चे अपनी आसपास की दुनिया को समझने और विभिन्न आकारों की पहचान व उनकी मात्रा का पता लगाने के लिए अमानक इकाइयों का उपयोग भी करते हैं। लेकिन मापन की अवधारणा पर समझ बनाने और अमानक इकाइयों से मानक इकाइयों के उपयोग की तरफ़ ले जाने के लिए अभ्यास के पर्याप्त अवसरों की आवश्यकता होती है। यदि बच्चों को वस्तुओं की लम्बाई, भार, दूरी, आदि की माप करने, तुलना करने और उनकी इकाइयों के बीच सम्बन्धों को समझने के लिए क्रियात्मक गतिविधियों से गुज़ारा जाए तो वे मापन की एक पुख़्ता समझ बना पाते हैं। इसी सन्दर्भ में एक प्रयास लम्बाई मापन की अवधारणा पर किया गया। इसमें सबसे पहले बच्चों की समझ का आकलन किया गया, और शिक्षक द्वारा साझा की गईं बच्चों की चुनौतियों को ध्यान में रखकर कक्षा-कार्य की योजना बनाई गई। शिक्षक के द्वारा साझा की गई बातचीत और आकलन में यह पता चला कि बच्चे स्केल नहीं पढ़ पाते, वे मापन के लिए प्रयुक्त विभिन्न इकाइयों को नहीं समझते, और एक इकाई से दूसरी इकाई में परिवर्तन को भी नहीं पकड़ पाते।

> एक छोटा-सा गाँव था। उसी गाँव में कक्षा 5 में पढ़ने वाला एक बच्चा अपनी माताजी द्वारा दी गई सूची के सामान ख़रीदता है। वह बाज़ार जाता है, और माँ की सूची के अनुसार सामग्री (आलू, पाताल, सरसों तेल, चीनी, रस्सी, तार, दूध, आदि) लेकर आता है। वह दुकानदार से बिल लेकर आता है, लेकिन उस बिल के अनुसार उसे ये समझ में नहीं आता कि कौन-सी सामग्री किस इकाई में दी गई है। क्या आप उसकी मदद करना चाहेंगे?

उपरोक्त चुनौतियों को चिह्नित करते हुए कक्षा 5 के बच्चों के साथ इस अवधारणा पर काम की शुरुआत की गई। इस कक्षा में कुल 15 बच्चे नामांकित हैं। इनमें से 12 बच्चे नियमित तौर पर उपस्थित रहते हैं। सबसे पहले, बच्चों को एक बाज़ार के दृश्य पर कहानी सुनाई गई। इसमें हो रहे क्रियाकलापों को केन्द्रित करते हुए मापन की अलग-अलग इकाइयों के सम्बन्ध में चर्चा करते

हुए बच्चों का ध्यान परिवेश में वस्तुओं के मापन के लिए काम में ली जाने वाली विभिन्न इकाइयों पर केन्द्रित किया गया। बातचीत में पाया गया कि 8 बच्चे परिवेशीय मापन इकाइयों से परिचित थे, जबकि 7 बच्चे इन इकाइयों से भी ठीक से परिचित नहीं थे। इन बच्चों के कारण मापन इकाइयों पर बात शुरुआत से ही की गई। उन्हें तराज़ू-बाँट, दर्ज़ी का मीटर स्केल, लीटर का बर्तन, आदि दिखाते हुए चर्चा की गई। मुझे लगा कि सभी इस गतिविधि में शामिल हो रहे थे और इन इकाइयों से कुछ-कुछ जुड़ाव महसूस करने लगे थे।

अब बारी थी इन अलग-अलग इकाइयों के सन्दर्भ में बच्चों की समझ को केन्द्रित करने की। प्रयास था कि उनमें ये समझ विकसित हो सके कि मापन की यह इकाइयाँ किस प्रकार निर्धारित की गईं, और इनकी उपयोगिता क्या है? लम्बाई के बारे में बात शुरू करने के लिए बच्चों के सामने फिर से एक प्रश्न रखा गया, "आपकी कक्षा में सबसे लम्बा कौन है?" सभी बच्चे एक स्वर में बोलने लगे, "पावनी सबसे लम्बी है।" यहाँ तक तो सब ठीक था, लेकिन अगले प्रश्न, "पावनी सबसे लम्बी कैसे है?" ने कक्षा में चल रहे कोलाहल को एकदम शान्त कर दिया। तभी निखिल ने आगे बढ़ते हुए जवाब दिया, "पावनी जब कक्षा में सबके साथ खड़ी होती है तो सब उसके बालों तक नहीं पहुँच पाते हैं।" वहीं सानिया का कहना था, "पावनी पूजा से लम्बी है तो दिखती है।" यहाँ सबसे बड़ी बात ये हुई कि इस चर्चा में कक्षा के सभी बच्चे रोचकता से शामिल हो रहे थे। चर्चा को सार्थकता देते हुए बातचीत को आगे ले जाने के लिए फिर बच्चों से सवाल किया, "मान लेते हैं कि पावनी पूजा से लम्बी है। लेकिन कितनी लम्बी है इसका पता कैसे लगाएँ?" अब बच्चे कुछ देर के लिए शान्त हो गए, लेकिन उनमें आपस में कानाफूसी शुरू हो गई। और सभी बच्चे इस प्रकार अपने तर्क देने लगे :

आँचल : सभी बारी-बारी से दीवार के पास खड़े होते हैं और निशान लगा लेते हैं। आख़िर में देखेंगे किसका निशान सबसे ऊपर है?

गजराज : लकड़ी की छड़ी लाकर नापते हैं। जो उस छड़ी की गिनती में सबसे ज़्यादा होगा वही लम्बा होगा।

अंकित : सब अपने-अपने बित्ते से मापते हैं, और पता करते हैं कि पावनी कितने बित्ते की है।

लेकिन तभी अंकित की बात पर ज़ोर देते हुए वैशाली बोली, "बित्ते से सब माप तो सकते हैं, लेकिन किसी का बित्ता छोटा तो किसी का बड़ा होगा।" तब सबने मिलकर तय किया कि पावनी के बित्ते से ही पता करते हैं कि कौन लम्बा है और कौन छोटा।

तभी कक्षा में बैठी शिक्षिका भी हो रही प्रक्रिया में शामिल हुईं, और संवाद में जुड़ीं। शिक्षिका ने पाया कि कक्षा में ज़्यादातर चुप रहने वाले बच्चे भी आज खुलकर अपने विचार व्यक्त कर पा रहे हैं। शिक्षिका ने बातचीत को आगे बढ़ाते हुए श्यामपट्ट पर एक सारणी बनाई, और उसमें बच्चों के अवलोकन दर्ज करने लगीं। इसमें सबसे पहले खण्ड में बच्चों के नाम, दूसरे में पावनी के बित्ते से अनुमान लगाकर लिखना,

तीसरे में ख़ुद के बित्ते से माप, और चौथे खण्ड में पावनी के बित्ते से मापकर बित्ते के मान को लिखवाती गईं। इस प्रक्रिया में, बित्ते लिखने में उन बच्चों को शामिल किया गया जो अभी भी अंक लिखने में ग़लतियाँ करते हैं। अब प्राप्त सारणी का विश्लेषण किया गया, और बच्चों का ध्यान किसी एक इकाई को रेखांकित करते हुए मात्रात्मक रूप में मिलने वाले अनुभवों से जोड़ा गया। इसमें सभी बच्चे ये समझ बना पा रहे थे कि लम्बाई मापने के लिए किसी एक पैमाने की आवश्यकता है।

बालमन नटखट तो होता ही है, लेकिन इसके साथ ही बच्चों के मस्तिष्क में भी अनेक सवाल आ रहे होते हैं। इस आयु वर्ग में उनकी कल्पनाशीलता जितनी तेज़ी के साथ विकसित होती है, उतनी ही तेज़ी से उनकी कल्पनाओं को एक समृद्ध वातावरण से पोषित किया जाना आवश्यक होता है।

बातचीत अगले दिन जारी थी। अब यह चर्चा और भी रोचक होने वाली थी। चर्चा के दौरान शिक्षिका और मेरे हाथ में स्केल पट्टी, दर्ज़ी का मीटर स्केल, और एक चार्ट शीट थी। बच्चे हमें कौतूहल की नज़र से देख रहे थे। सबसे पहले, पिछले दिन की बातचीत का दोहराव किया गया। ऐसा करके आज की चर्चा की ओर बच्चों का ध्यान केन्द्रित किया गया। फिर सभी के साथ स्केल पट्टी और दर्ज़ी की मीटर स्केल साझा की गई। बच्चों से चर्चा हुई कि आप सभी के बित्ते की लम्बाई अलग-अलग है, इसे अमानक इकाई कहते हैं। और सभी की सहमति से यदि किसी एक के बित्ते को चिह्नित कर लिया जाए तो उसे एक तरह से मानक इकाई माना जा सकता है। लेकिन तब हमें हर चीज़ को उसी बित्ते की मदद से मापना होगा, ताकि तुलना की जा सके। इसलिए हम स्केल का उपयोग करते हैं क्योंकि स्केल में दिए माप हर जगह एक-से होंगे, और तुलना करना भी आसान होगा। बच्चे इस बात से सहमत थे। अब उन्हें लम्बाई के मानक पैमाने से परिचित करवाने में थोड़ी सहजता हुई। मसलन, अंजना ने कहा, "सर, यदि स्केल से कोई भी बच्चा मेरी लम्बाई मापे तो वह बराबर ही होगी, न कि बित्ते की तरह अलग-अलग।" अंजना की बात को आगे बढ़ाते हुए स्केल पठन के सही तरीक़े पर बच्चों का ध्यान दिलाया गया। इस बातचीत से अधिकांशत: बच्चे स्केल पठन की प्रक्रिया को अच्छे से समझ पाए।

स्केल पठन या पैमाने की समझ पर कक्षा–कार्य अनुभव

सभी बच्चे ये तो समझ पा रहे थे कि स्केल को कैसे पकड़ना है और कैसे पढ़ना है, लेकिन अभी भी वे केवल उस स्केल पर दिए गए अंकों को ही पढ़ रहे थे। जैसे– यह स्केल 15 लम्बा है, यह स्केल 30 लम्बा है। इस दर्ज़ी टेप की गिनती 150 तक है तो ये 150 लम्बा है। बच्चों के इस प्रकार के जवाब को इकाई के साथ जोड़कर 15 सेंटीमीटर, 30 सेंटीमीटर, 150 सेंटीमीटर बताते हुए पैमाने के साथ पढ़ने पर अभ्यास करवाया गया। इस बदलाव के साथ ये भी ज़रूरी था कि स्केल के पैमाने की उपयोगिता के सम्बन्ध में भी उनकी समझ बनाई जाए।

अब बच्चों को अपनी पुस्तक के एक पेज की लम्बाई, चौड़ाई व मोटाई का पता लगाने के लिए कहा गया।

पूजा ने बताया, "सर, किताब 18 सेंटीमीटर लम्बी और 13 सेंटीमीटर चौड़ी है, लेकिन इसकी मोटाई 1 सेंटीमीटर से भी कम है। यह मोटाई कितनी है, मैं ये पता नहीं कर पा रही।" बाक़ी बच्चों के भी कुछ इसी प्रकार के अनुभव आ रहे थे। इससे एक नए शब्द 'मिलीमीटर' से बच्चों को परिचित करवाने में आसानी हुई। बच्चों से चर्चा की गई कि 0 से 1 के बीच खिंची हुई छोटी-छोटी 10 रेखाएँ मिलीमीटर की हैं। इतना सुनते ही अंकित ने कहा, "सर, इस पेज की मोटाई 1 सेंटीमीटर से 1 मिलीमीटर कम है।"

साथ ही, कुछ बच्चे स्केल में बने पैमाने के अलावा स्केल की बनावट को भी लम्बाई में शामिल कर रहे थे। इस प्रकार की ग़लती को ठीक करने पर उनके साथ चर्चा की गई। इसके बाद बच्चों द्वारा साझा किए गए कुछ उदाहरणों से जोड़ते हुए ये बातचीत की गई कि लम्बाई की बढ़ती माप इकाई (मिलीमीटर, सेंटीमीटर, मीटर, किलोमीटर, आदि) का उपयोग कब-कब किया जाता है। जैसे– पेन की रिफ़िल की मोटाई मिलीमीटर में, किताब की लम्बाई सेंटीमीटर, मेज़ व कमरे की लम्बाई मीटर में, आदि।

इकाई परिवर्तन की समझ

ये रोचक सफ़र अभी जारी था, और यह काफ़ी रोमांचक होने वाला था। बच्चे समझ चुके थे कि मिलीमीटर से मिलकर सेंटीमीटर, सेंटीमीटर से मिलकर मीटर, और मीटर से मिलकर किलोमीटर बनता है। इसके साथ ही

ये लम्बाई मापन की इकाइयाँ के बढ़ते क्रम में लिखते हैं। अलग-अलग इकाइयों के इस सम्बन्ध को एक बार फिर बच्चों के साथ स्केल और दर्ज़ी टेप की मदद से श्यामपट्ट की लम्बाई नापकर समझा गया। श्यामपट्ट की लम्बाई को सेंटीमीटर में नापकर लिखा गया। यह लम्बाई 138 सेंटीमीटर आ रही थी। इस माप पर बच्चों के साथ चर्चा करते हुए 138 सेंटीमीटर को 1 मीटर व 38 सेंटीमीटर पढ़ने की ओर बच्चों का ध्यान दिलाया गया। बच्चों के साथ यह बातचीत भी की गई :

सवाल : इस लम्बाई के आधार पर बताओ कि 138 सेंटीमीटर को 1 मीटर व 38 सेंटीमीटर में बदलने के लिए 100 का गुणा करना होगा या भाग?

कुछ देर तो सभी बच्चे सोच में पड़ गए, तभी निखिल ने कहा, "सर, 100 से भाग देना पड़ेगा क्योंकि 100 सेंटीमीटर से मिलकर एक मीटर बनता है।" बच्चों की बात को आगे बढ़ाते हुए शिक्षिका ने भी बच्चों को समझाया कि इसी प्रकार 1 मीटर को 100 से गुणा करने पर हमें सेंटीमीटर प्राप्त होता है। अब बच्चे इसे आसानी से समझ पा रहे थे।

बच्चे मापन की पुख़्ता समझ बना पाएँ, इसके लिए बच्चों को टाइल-आधारित गतिविधि व कार्यपुस्तिका / अभ्यासपुस्तिका में दिए गए सवालों के माध्यम से अभ्यास करवाया गया। कुछ सवाल गृहकार्य के लिए भी देते हुए कक्षा का समापन किया गया।

लम्बाई मापन पर संख्या- व इबारत-आधारित संक्रियाएँ

जब बच्चे मापन सीखने की इस यात्रा में लम्बाई मापन की बुनियादी अवधारणाओं की समझ बना चुके, उनको कुछ जोड़-घटाव पर आधारित सवाल, जिनमें इबारती सवाल भी शामिल थे, दिए गए। बच्चे अब इन सवालों को कर पा रहे थे।

समेकित समझ व अनुभव

- बच्चे, गणित करके सीखने की प्रक्रिया में शामिल हो रहे हैं।
- इन प्रक्रियाओं से बच्चों में अनुमान लगाने और तर्क के साथ अपनी बात रखने का कौशल विकसित हुआ है।
- वे बच्चे जिन्हें स्केल पठन में चुनौती हो रही थी, अब आसानी से इसे पढ़ने लगे हैं।
- बच्चे अब आसानी से लम्बाई मापन की इकाइयों को समझ पा रहे हैं, और इनको आपस में परिवर्तित कर पा रहे हैं।

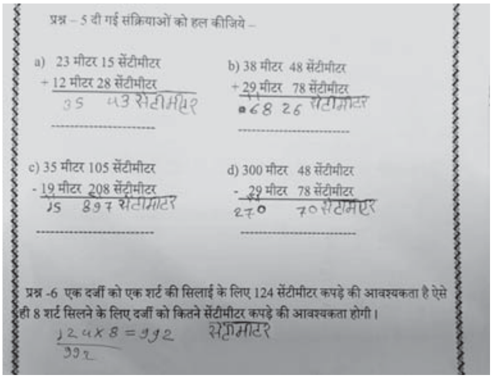
प्रश्न – 5 दी गई संक्रियाओं को हल कीजिये –

a) 23 मीटर 15 सेंटीमीटर
+ 12 मीटर 28 सेंटीमीटर

b) 38 मीटर 48 सेंटीमीटर
+ 29 मीटर 78 सेंटीमीटर

c) 35 मीटर 105 सेंटीमीटर
- 19 मीटर 208 सेंटीमीटर

d) 300 मीटर 48 सेंटीमीटर
- 29 मीटर 78 सेंटीमीटर

प्रश्न -6 एक दर्जी को एक शर्ट की सिलाई के लिए 124 सेंटीमीटर कपड़े की आवश्यकता है ऐसे ही 8 शर्ट सिलने के लिए दर्जी को कितने सेंटीमीटर कपड़े की आवश्यकता होगी।

शिक्षिका इन सभी प्रयासों से काफ़ी उत्साहित हुईं, और उन्हें बच्चों के सीखने में इस तरह की प्रक्रियाएँ करना अच्छा लगा। उन्हें लगा कि वह भी यह सब कर सकती हैं।

सुभाष चन्द सैनी ने भूगोल में स्नातकोत्तर किया है। आपको गणित और विज्ञान के अध्यापन में रुचि है। आप बच्चों के साथ गतिविधि-आधारित शिक्षण पद्धतियों का उपयोग करना पसन्द करते हैं। आपने बोध शिक्षा समिति जयपुर, राजस्थान में गणित-विज्ञान स्रोत शिक्षक के रूप काम किया है। साल 2021 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन जांजगीर ज़िले के पामगढ़ ब्लॉक में ब्लॉक रिसोर्स पर्सन के रूप में कार्यरत हैं।

सम्पर्क : subhash.saini@azimpremjifoundation.org

शाला में पुस्तकालय : पढ़ने–लिखने के सन्दर्भ में

धीरज पटेल

बच्चे समझकर पढ़ना-लिखना सीखें यह ज़रूरी है, और यह सीखने में पुस्तकालय की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। शिक्षक ने पुस्तकालय की अहमियत को जानते हुए विद्यालय में बच्चों के साथ मिलकर पुस्तकालय शुरू किया। बच्चे कहानियों को पढ़ने लगे, मौखिक रूप से उन्हें सुनाने लगे, और तब ख़ुद से कहानियाँ लिखने भी लगे। लेख पढ़कर आप यह जान पाएँगे कि यह सब कैसे सम्भव हो पाया। शिक्षक की यह कोशिश इस विश्वास को भी पुख़्ता करती है कि सभी बच्चे पढ़-लिख सकते हैं। -सं.

परिचय

मेरे विद्यालय का नाम शासकीय प्राथमिक शाला सहजपुरीकलां है। यह विद्यालय मध्य प्रदेश के बुन्देलखण्ड क्षेत्र के सागर ज़िले के विकासखण्ड रहली मुख्यालय से 12 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। सहजपुरीकलां गाँव की आबादी लगभग 1500 है। यहाँ के लोगों की आय मुख्यतः कृषि एवं कृषि से जुड़े कार्यों, और वनोपज पर निर्भर है। स्कूल में पढ़ने वाले बच्चों के माता-पिता की आर्थिक स्थिति कमज़ोर है। कुछ बच्चों के माता-पिता काम की तलाश में शहर चले जाते हैं। बच्चे भी इनके साथ पलायन कर जाते हैं, और तीज-त्योहार या कृषि कार्य होने पर वापस आते हैं। कभी-कभी बच्चे 4-5 महीने बाद वापस आते हैं जिससे उनकी पढ़ाई प्रभावित होती है।

मेरी शाला में 67 बच्चे दर्ज हैं। शाला में एकल शिक्षक के रूप में इन बच्चों को पढ़ाने की नई-नई विधि पर कार्य करने का प्रयास करता हूँ। कक्षा के सभी बच्चों को पाठ्यपुस्तक के साथ-साथ पुस्तकालय की किताबों से भी जोड़ने का प्रयास कर मैंने बच्चों में नैतिक-सामाजिक मूल्यों के साथ-साथ लेखन कौशल जैसी शैक्षिक गतिविधियों में दक्षता लाने का भी प्रयास किया है।

सन्दर्भ

कहानियाँ सुनना किसे पसन्द नहीं? गाँव के परिवेश में बच्चों में जब सुनने की समझ विकसित होती थी तभी से उन्हें दादा-दादी,

चाचा-चाची, मम्मी-पापा, या गाँव के बुज़ुर्ग *रामायण, महाभारत,* आल्हा-ऊदल, राजा हरिश्चन्द्र, मीराबाई, राजा-रानी, *पंचतंत्र* आदि की कहानियाँ सुनाते थे। आज तकनीकी के दौर में बच्चे घर व शाला में टीवी, मोबाइल में गेम खेलने में ज़्यादा व्यस्त रहते हैं। मैंने सोचा, शाला में ही ऐसे मौक़े निर्मित करें जहाँ बच्चा स्वतंत्र रूप से पढ़े और कहानियों से जुड़े। उसमें एकाग्रता के साथ लिखने की दक्षता विकसित हो। लेकिन इस कोशिश में महसूस हुआ कि बच्चे पढ़ने में रुचि नहीं ले रहे हैं। इसलिए यह निश्चय किया कि बच्चों के साथ पढ़ने के अवसर बनाने पर काम किया जाए ताकि वे पढ़ने में रुचि ले सकें, और उनमें पढ़ने की आदत भी विकसित की जा सके।

पुस्तकालय के उद्देश्य

- विद्यालय की किताबों को पढ़ने-पढ़ाने की आदत से जोड़ना;
- बच्चों में कहानी पढ़ने, सुनने-सुनाने एवं स्वयं से कहानी बनाने जैसे कौशलों का विकास करना;
- किताबों के माध्यम से बच्चों को स्वतंत्र अभिव्यक्ति और लेखन की ओर ले जाना।

पुस्तकालय और सीखने के प्रतिफल का सम्बन्ध

- कक्षा में पाठ्यपुस्तक के अलावा दूसरी किताबें उपलब्ध कराई जाती हैं, और उनके आधार पर अभिव्यक्ति व पढ़ने-लिखने के अवसर नियमित रूप से उपलब्ध कराए जाते हैं;
- कहानियों को पढ़ने-लिखने से जोड़ा जाता है;
- बच्चों को अपने मन से कहानी सुनाने और लिखने के अवसर दिए जाते हैं, और इस आधार पर उनकी मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति का आकलन किया जाता है;
- सीखने में चुनौती महसूस कर रहे बच्चों को अलग से समय दिया जाता है।

अपनाई गई आवश्यक प्रक्रिया

बच्चों में पढ़ने की आदत विकसित करने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए मैंने उनके साथ मिलकर पुस्तकालय का निर्माण किया। बच्चों को पुस्तकें पढ़ने के लिए अतिरिक्त समय दिया जहाँ वे बिना किसी दबाव व रोक-टोक के पुस्तकालय से किताबें उठाएँ, और पढ़ने का प्रयास करें। वे किताबों को उलटें-पलटें, चित्रों को देखें, किताबों से बातें करें, पढ़ी हुई कहानियों को लिखें, और मन से भी कहानियाँ बनाकर लिखें।

पुस्तकालय निर्माण

राज्य शिक्षा केन्द्र से प्राप्त पुस्तकों को बच्चों के सहयोग से व्यवस्थित करके रजिस्टर में दर्ज किया गया। पुस्तकालय का माहौल तैयार करने के लिए विद्यालय के एक कक्ष में पुस्तकों को तार पर लगाया। शुरुआत में कम शब्दों वाली किताबें तार पर लगाई गई थीं। इसके बाद बच्चों से किताबें सँभालने की ज़िम्मेदारी पर चर्चा की। किताबों के इस्तेमाल को लेकर कुछ नियम बनाए गए। जैसे– लंच के बाद किताबें पढ़ा करेंगे, कोई पुस्तकों को फाड़ेगा नहीं, जिन बच्चों को किताबें चाहिए होंगी वे रजिस्टर में दर्ज करेंगे, आदि।

बच्चों में पढ़ने की रुचि एवं आदत का विकास

हर दिन पढ़ने का समय अलग से निकाला गया। शुरुआत में बच्चों को समूह में बैठाकर किताब की कहानी को मैंने पढ़कर सुनाया। इसके बाद कहानी पर चर्चा की गई। इसमें पात्रों के बारे में चर्चा, शीर्षक पर चर्चा, कहानी को

अपने शब्दों में बोलना, कुछ प्रश्नों पर बातचीत, आदि शामिल थे।

मैंने कुछ खेल गतिविधि करवाने के बाद और छुट्‌टी से पहले बच्चों को पढ़ने के लिए किताबें देना शुरू किया। बच्चों को उनकी मनपसन्द की किताब लेने और देखने की स्वतंत्रता दी गई। मैंने देखा कि शुरुआत में छोटे बच्चे सिर्फ़ चित्र देखते, और चित्र देखते हुए आपस में उन चित्रों के बारे में बातचीत करते। बड़े बच्चे छोटी कहानियों की किताबें उठाते थे। ऐसा करते हुए बच्चों को एक हफ़्ता लगा। मैंने तय किया था कि बच्चों के साथ टोका-टाकी नहीं करनी है ताकि बच्चों में इन किताबों के बारे में लगाव बने, और उनमें पढ़ने की रुचि उत्पन्न हो सके। बड़े बच्चे भी शुरुआत में एक या दो पैराग्राफ़ ही पढ़ने की कोशिश कर रहे थे।

एक हफ़्ते बाद मैंने बच्चों से उनकी पढ़ी हुईं किताबों पर बातचीत शुरू की। मसलन, उनके अनुसार कहानी में क्या हो रहा है, आदि। बड़े बच्चों द्वारा शुरू में कहानी का दोहरान ही किया जाता था।

पढ़ी हुई किताबों द्वारा मौखिक एवं लिखित अभिव्यक्ति की ओर ले जाना

एक हफ़्ता बीत जाने के बाद मैंने बच्चों को पुस्तकालय से पढ़ीं कहानियों को सुनाना शुरू किया। मैंने पहले उन किताबों को सुनाने का निर्णय लिया जो छोटी और मज़ेदार थीं। इसके साथ ही प्रार्थना सभा के दौरान भी हर दिन एक या दो बच्चों द्वारा कहानी सुनाना तय किया गया। बच्चों के साथ बैठकर, बातचीत के ज़रिए यह तय किया गया कि अगले दिन की प्रार्थना सभा में कौन कहानी सुनाएगा। (आमतौर पर हम तय कर देते हैं कि कहानी कौन सुनाएगा। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि पढ़ने-लिखने की शुरुआत में बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित हो। एक अच्छा शिक्षक अपनी कक्षाओं में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का ध्यान रखता है। धीरे-धीरे बच्चे इस प्रक्रिया के महत्त्व को समझने लगते हैं, और स्वयं से पहल भी करने लगते हैं।) कुछ समय बाद बच्चे ख़ुद ही पूछने लगे कि सर, बाल सभा में भी हम कहानी सुना सकते हैं क्या। फिर हम प्रत्येक शनिवार को होने वाली बाल सभा में भी कहानी सुनाने को शामिल करने लगे। शुरुआत में कुछ बच्चों ने क्रम से कहानी सुनाई, कुछ ने किताब से पढ़कर, व कुछ ने अपने शब्दों में कहानी सुनाने की कोशिश की। मैंने देखा कि यदि बच्चे ख़ुद से पहल करते हैं तो उसपर काम करने का साहस भी दिखाते हैं। अपने काम के प्रति लगाव होने, और उसे प्रदर्शित करने से बच्चों में आत्मविश्वास पैदा होता है। इस प्रक्रिया के द्वारा बच्चों में कहानी सुनाने के कौशल के साथ-साथ आत्मविश्वास भी बढ़ा। जो बच्चे अभी पढ़ने में चुनौती महसूस कर रहे थे, वे भी कहानी सुनकर कहानी के बारे में चर्चा करने लगे और हिज्जे करके पढ़ने की कोशिश कर रहे हैं।

लिखित अभिव्यक्ति की ओर...

इस प्रक्रिया को ऊपर बताई गई सभी प्रक्रियाओं के साथ जोड़कर ही कक्षा में करवाया जाता है। इसको हम निम्न चरणों में देख सकते हैं :

पहला चरण

पुस्तक से पढ़ी हुई कहानी को देख-देख कर लिखने से लेखन की शुरुआत की गई। पढ़ी

गईं कहानियों को अपने शब्दों में लिखने को कहा गया। इसमें बच्चों को अपनी बुन्देलखण्डी भाषा के प्रयोग की छूट दी गई। शुरुआत में बच्चों को चुनौतियाँ आईं क्योंकि वे कहानी भूल जाते थे, या फिर ज्यों-का-त्यों लिखने की कोशिश करते थे। इसके लिए बच्चों को पढ़ी हुई कहानी को पहले अपने मन से सुनाने, और उसके बाद लिखने को कहा गया। इसके लिए मैंने भी कुछ कहानियाँ बच्चों को सुनाईं। बच्चों को कहानी सुनाने की युक्तियाँ और तरीक़े बताए। धीरे-धीरे बच्चे इन युक्तियों का इस्तेमाल करने लगे।

दूसरा चरण

इस प्रक्रिया का दूसरा चरण था, मन से कहानी बनाना। इस प्रक्रिया के लिए बच्चों को उनके परिवेश से जुड़े कुछ शब्द (जैसे– किसान, बैल, गाय, खेत, बादल, पानी, आदि) देकर उनसे मौखिक कहानी बनाने और उसे लिखने के लिए प्रेरित किया गया। बच्चे नई-नई कहानियाँ पढ़ रहे थे, इसलिए वे इन्हीं पढ़ी-सुनी कहानियों में इन नए शब्दों को जोड़ते हुए नई कहानी बना पाए। जिन बच्चों को लेखन में चुनौती आ रही थी, मैंने उनकी कहानियों को सुनकर लिखा और फिर उनसे पढ़ने को कहा। चूँकि यह कहानियाँ उन्होंने ही बनाई थीं, इसलिए उनको इन कहानियों को पढ़ने में आसानी भी हुई। स्वतंत्र लेखन की प्रक्रिया में बच्चों से मात्राओं, विराम चिह्नों जैसी भाषाई और व्याकरणिक त्रुटियाँ होती हैं। इनपर काम करने में एक शिक्षक को धैर्य रखने की ज़रूरत होती है। शुरुआत में जब अच्छा ख़ासा काम कहानी पर हो जाए, बच्चे ख़ुद से लिखने लगें, पढ़ने की कोशिश करने लगें, तभी विराम चिह्नों और मात्राओं पर काम शुरू करना चाहिए।

पुस्तकालय के इस्तेमाल का प्रभाव जो मैंने महसूस किया

- बच्चों में पढ़ने की रुचि बढ़ी। वे हर दिन नई किताब पढ़ने की कोशिश करते हैं।
- कक्षा 3-5 में नियमित आने वाले 35 बच्चों में से 18 बच्चे किताबों को धाराप्रवाह पढ़ने लगे हैं। इनमें से 12 बच्चे कहानी को अपने शब्दों में लिखने लगे हैं, और नई कहानी भी बनाने लगे हैं।
- कुछ बच्चे अभी हिज्जे करके पढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। ऐसे बच्चों को अतिरिक्त समय दिया गया। इन

बच्चों की मौखिक अभिव्यक्ति अब काफ़ी बेहतर हो गई है। वे कम शब्दों में सरल वाक्य लिखने की ओर आगे बढ़ रहे हैं।

- शाला के ज़्यादातर बच्चों को किताबों के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास होने लगा है। वे पुस्तकों को सहेजकर उपयुक्त स्थान पर रखते हैं, रजिस्टर में दर्ज कराते हैं, और दूसरे बच्चों को भी ऐसा करने की सलाह देते हैं।

- अलग-अलग पुस्तकों को पढ़ने से बच्चे अपनी पाठ्यपुस्तक की किताब भी समझ के साथ पढ़ने का प्रयास कर रहे हैं। वे पाठ्यपुस्तक के पीछे दिए गए प्रश्न अभ्यास को भी अब मौखिक रूप से अपने शब्दों में बता पाते हैं।

इस प्रक्रिया से बनी मेरी समझ

शुरुआत में बच्चों के साथ इस काम को करना मुझे जटिल लग रहा था। मन में ख़्याल आ रहा था कि मैं अकेला इस काम को कैसे कर पाऊँगा। लेकिन बाद में ये चिन्ताएँ मुझे महत्त्वहीन लगीं। बच्चों की भूमिका बढ़ाने से उक्त प्रक्रियाएँ एक शिक्षक के लिए मददगार ही होती हैं। आज मेरे बच्चे अपनी पूरी सक्रियता और ज़िम्मेदारी से काम करने की पहल करने लगे हैं। शुरुआत में ज़रूर बच्चों को इस प्रक्रिया में जोड़ने में समय लगता है। यह समय कुछ कम-ज़्यादा हो सकता है, लेकिन यह स्वाभाविक-सी बात है कि छोटे बच्चों के साथ शिक्षक को पर्याप्त समय देना ही चाहिए।

हर दिन योजनाबद्ध तरीक़े से काम करने से प्रक्रिया सरल होती गई। लंच के समय सभी बच्चे पुस्तकालय में अपनी रुचि की पुस्तकें देखने व पढ़ने लगे हैं। उन्हें कहानियाँ समझ में आने लगी हैं। प्रार्थना सभा और शनिवार को बाल सभा के दौरान वे कहानियाँ सुनाने लगे हैं। प्रत्येक शनिवार मैं भी कोई-न-कोई कहानी बच्चों को सुनाता हूँ। मैंने देखा कि मैं जिस कहानी को पढ़कर सुनाता हूँ, बच्चे भी उस कहानी को ज़रूर पढ़ने की कोशिश करते हैं।

निरन्तर प्रयास से वे याद की गई कहानियाँ सुनाने लगे, और उन्हें सुन्दर व स्पष्ट अक्षरों में लिखने लगे। मुझे इस बात की ख़ुशी है कि यह प्रयास मुझे सफल होता दिख रहा है। स्कूल में हम आमतौर पर किसी गतिविधि को एक या दो बार करके छोड़ देते हैं, लेकिन यदि हमारे अपने प्रयासों में निरन्तरता होती है तो उसका प्रभाव ज़रूर दिखता है। मेरा भी यह विश्वास पुख़्ता हुआ कि प्रक्रियाओं में निरन्तरता और रोचकता बनाए रखनी है।

अपने सभी बच्चों की क्षमताओं में विश्वास ज़रूरी होता है। सभी बच्चों को महसूस होना चाहिए कि वह सभी पढ़ना-लिखना सीख सकते हैं। शिक्षक ने यदि ज़रा भी शंका दिखाई तो

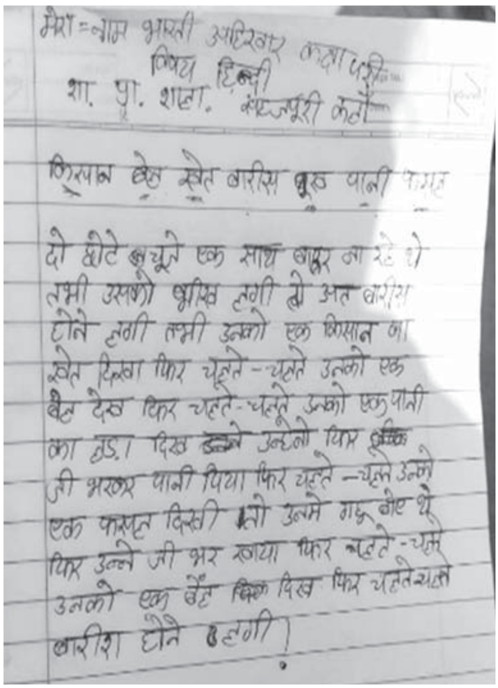

चित्र : एक बच्ची द्वारा दिए गए शब्दों का इस्तेमाल करते हुए मन से लिखी गई कहानी

बच्चे बहुत जल्दी हतोत्साहित होते हैं। बच्चों को प्रोत्साहित करने पर वे और उत्साह से प्रतिभाग करते हैं।

चुनौतियाँ

- शुरू में कुछ बच्चे किताबों को फाड़ देते थे, या उनमें कुछ लिख देते थे।
- बाल सभा में कहानी सुनाते समय शुरू में बच्चों को हिचक होती थी।
- कुछ बच्चों को अभी भी पढ़ने में चुनौती आ रही है।
- एकल शिक्षक स्कूल होने के कारण मैं कभी-कभी बच्चों को समय नहीं दे पाता हूँ।
- कुछ बच्चों को एक-दो किताबें ही ज़्यादा अच्छी लगती हैं। उनके अलावा वे कोई और किताब नहीं पढ़ना चाहते। उनको नई किताबों से जोड़ना भी एक चुनौती थी।
- बच्चों के नियमित शाला न आने से उनके सीखने का क्रम टूट जाता है।

आगे की योजना

- जो बच्चे अभी पढ़ने-लिखने में चुनौती महसूस कर रहे हैं उन्हें पढ़ने-लिखने की ओर ले जाने के लिए और सामग्री का निर्माण करना;
- जो बच्चे धाराप्रवाह पढ़ रहे हैं उनको एक स्तर ऊपर की किताबें देने के साथ नई-नई चुनौतियाँ देना;
- बच्चों को ख़ुद से कहानी बनाने को प्रेरित करना;
- किताबों की कहानियों को अपनी भाषा में लिखने का प्रयास करवाना;
- अगले साल तक अपनी शाला की एक किताब तैयार करना जिसमें बच्चों के हाथ से लिखी हुई कहानियाँ होंगी।

धीरज पटेल पिछले 12 वर्षों से प्राथमिक शिक्षक के रूप में कार्य कर रहे हैं। वर्तमान में सागर ज़िले के रहली ब्लॉक की प्राथमिक शाला सहजपुरी कलां में कार्यरत हैं। उन्हें बच्चों के साथ खेल- एवं गतिविधि-आधारित शिक्षण करने और शाला में पुस्तकालय का सक्रिय संचालन करते हुए लोकभाषा में कहानी को प्रस्तुत करने में आनन्द आता है। उनकी पर्यावरण संरक्षण में गहरी रुचि है।

सम्पर्क : dheerajpatel309@gmail.com

बच्चों के साथ इबारती सवालों को हल करने की चुनौतियाँ और हमारे प्रयास

रेखराम साहू

यह आलेख बच्चों के साथ इबारती सवालों की चुनौतियों को कम करते हुए बच्चों द्वारा इबारती सवालों को हल करने एवं ख़ुद से इबारती सवाल बनाने के अनुभवों पर आधारित है। बच्चे संख्या को काफ़ी हद तक जानते-पहचानते हैं, फिर भी वे अकसर यह पूछते हैं कि इस सवाल में जोड़ना है या घटाना है। इबारती सवालों को लेकर यह दिक़्क़त आम है, और सभी के अनुभव में है। -सं.

मैंने बच्चों के साथ इबारती सवालों के काम के दौरान अपने इस शिक्षण अनुभव में समझा कि जब तक गणित में भाषा का अधिक-से-अधिक उपयोग नहीं किया जाए, बच्चों को गणित समझने में दिक़्क़त होती है। गणित के किसी भी सवाल पर काम करने से पहले बच्चों के जीवन के दैनिक अनुभवों को चर्चा में सवाल के रूप में शामिल करना काफ़ी उपयोगी होता है। मैंने अपनी गणित की कक्षा में सवालों को समझने के लिए भाषा का भरपूर उपयोग किया। एक महीने बाद ही मुझे कक्षा में यह बदलाव देखने को मिला कि बच्चे सवाल समझने लगे, और अब उन्हें सवाल हल करने में समय नहीं लग रहा है।

मैं कक्षा में इस बात को लेकर चिन्तित रहता था कि बच्चे सवाल पढ़कर समझ नहीं पाते, और तब मैंने यह प्रयास शुरू किया। हालाँकि स्थानीय मान की अवधारणा पर काम करते समय भी मुझे यह समस्या आई थी। उस समय भी बच्चों का यही सवाल होता था कि सर, ये सवाल हासिल वाला है या बिना हासिल वाला। मैं सोचता रहता था कि बच्चों के इन सवालों की जड़ें कहाँ हैं। मैंने इस समस्या को समझने के लिए बच्चों से अधिक-से-अधिक बातचीत करने का विचार किया। बच्चों के इस सवाल का समाधान स्थानीय मान की अवधारणा पर लगातार तीन महीने तक काम करके निकला। फिर भी कक्षा में 3-4 बच्चे ऐसे थे जो पूछते थे कि यह हासिल वाला है या बिना हासिल वाला, और उनको जवाब उनके दोस्तों से ही मिल जाते थे। लेकिन इबारती सवाल को समझने, और समझकर हल करने में सभी बच्चों को दिक़्क़त थी।

इस समस्या को समझने के लिए मैंने दो मुख्य तरीक़े अपनाए। पहला, जो 3 से 4 बच्चे कक्षा स्तर के थे और समझ जाते थे, उनके साथ लंच या खेल के समय इस बारे में बातचीत करना कि वह कैसे समझ जाते हैं कि इस इबारती सवाल को कैसे हल किया जाएगा। दूसरा, स्कूल समय के बाद दूसरे शिक्षक साथियों के साथ चर्चा करना, और यह जानना कि उनकी कक्षा की समस्या भी हमारी समस्या जैसी ही है या कुछ अलग।

अपने कक्षा शिक्षण में काफ़ी सजगता से शामिल किए गए तरीक़े

सबसे पहले हमने इबारती सवालों को बच्चों के दैनिक जीवन से जोड़कर समझने पर काम शुरू किया। जैसे— कौन-कौन से बच्चे बाज़ार जाते हैं; बाज़ार में हम कौन-कौन सी चीज़ें देखते हैं; किस-किस बच्चे ने बाज़ार से कभी

कोई चीज़ ख़रीदी है, और वह कौन-सी चीज़ थी; आदि। इस चर्चा के बाद मैंने ब्लैकबोर्ड पर कुछ चीज़ों (जैसे– आलू, टमाटर, भिण्डी, लौकी, प्याज़, आदि) के चित्र बना दिए। मैंने कुछ ऐसी चीज़ों के चित्र भी बनाए जिन्हें बच्चे हरेक दिन अपने घर में देखते हैं और बरतते हैं। जब मैं इन चीज़ों के चित्र बना रहा था, बच्चों से चर्चा भी करता जा रहा था कि कौन-सी चीज़ किस क़ीमत पर मिलती है। बच्चे भी मज़े से चीज़ों की क़ीमत बता रहे थे– आलू 20 रुपए किलो, टमाटर 10 रुपए किलो, भिण्डी 30 रुपए किलो, आदि। कुछ बच्चे बताई जा रही क़ीमतों से असहमति जताते हुए दूसरी क़ीमतें भी बता रहे थे। मसलन, भिण्डी 30 नहीं 40 रुपए किलो है। मैं बच्चों द्वारा बताई जा रही क़ीमतों को चीज़ों के नीचे लिखते गया।

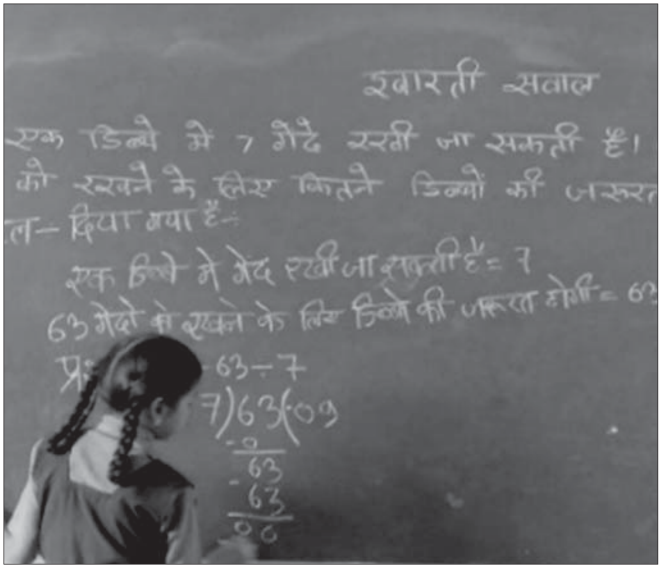

अगला काम था बच्चों से सवाल पूछकर उन्हें बोर्ड पर लिखना और चर्चा करना। मैंने बच्चों से पूछा, “मान लो आप अपने माता-पिता के साथ बाज़ार जाते हैं और 1 किलो टमाटर, 1 किलो आलू और 1 किलो भिण्डी ख़रीदते हैं। बताओ, आपको सब्ज़ीवाले को कितने रुपए देने होंगे?” सभी बच्चे ब्लैकबोर्ड पर लिखी संख्याओं को जोड़ने-घटाने की संक्रियाएँ करने लगे। इस दौरान वे आपस में चर्चा भी करने लगे कि इसको जोड़ना होगा क्योंकि हम सभी चीज़ों के पैसे देंगे न सब्ज़ीवाले को! कुछ बच्चों ने मौखिक जोड़कर ही बता दिया, लेकिन ज़्यादातर बच्चों ने कॉपी में जोड़ने की संक्रिया की। लगभग एक सप्ताह तक सभी संक्रियाओं को बच्चों के अनुभव से जोड़ते हुए मौखिक और ब्लैकबोर्ड की सहायता से काम किया। जब बच्चे सवाल के सन्दर्भ को मौखिक रूप से पकड़ने लगे, बच्चों को ब्लैकबोर्ड के पास आकर ऐसे ही चित्र बनाते हुए सवाल बनाने के लिए प्रोत्साहित करना शुरू किया। मैंने बच्चों से कहा कि ऐसे ही दुकान-बाज़ार का उदाहरण देते हुए आप भी सवाल बनाएँ। बच्चों ने इस चुनौती को स्वीकार किया, और ब्लैकबोर्ड का उपयोग करके सवाल बनाए।

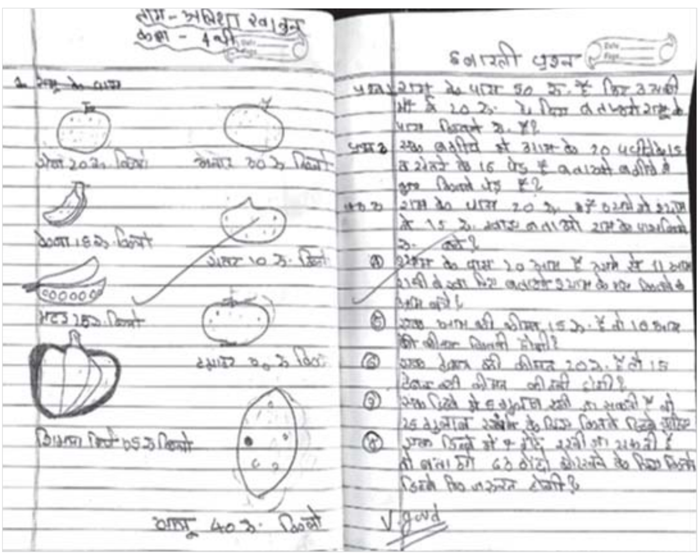

हालाँकि ब्लैकबोर्ड पर सवाल बनाने का काम 53 में से सिर्फ़ 3-4 बच्चे ही कर पाए। फिर मैंने बच्चों को घर में अपने माता-पिता से दैनिक ख़र्चों पर चर्चा करते हुए कम-से-कम 5 सवाल बनाकर लाने को कहा।

कक्षा की कार्ययोजना का विस्तृत विवरण

सबसे पहले मैंने कक्षा 4 के बच्चों का आकलन किया, और तब अलग-अलग समूह बनाए। मैंने पाया कि कुल 53 बच्चों में से 42 बच्चे नियमित रूप से स्कूल आते थे। कक्षा में 3 स्तर के बच्चे थे। नियमित स्कूल आने वाले 42 बच्चों में से 23 बुनियादी स्तर के, 13 मध्य स्तर के, और 6 बच्चे कक्षा के स्तर पर थे। वे 11 बच्चे जो नियमित स्कूल नहीं आते थे, उन्हें बुनियादी स्तर के बच्चों के समूह में रखा गया। मैंने बच्चों से सब्ज़ियों के नाम और नीचे उनके दाम लिखने को कहा। मैंने पाया कि जो बच्चे बुनियादी स्तर के थे, वह भी चित्र बनाकर उसके नीचे सब्ज़ी के दाम लिखने की पूरी कोशिश कर रहे थे। हालाँकि ये बच्चे वह संख्या नहीं पहचान पाते थे, लेकिन दाम को एकदम सही लिखते थे। मुझे संख्या पहचान पर साथ-साथ काम करने का रास्ता भी यहीं से मिला, और मैंने बुनियादी स्तर के बच्चों के साथ इबारती सवाल पर काम करते समय भाषा में पठन कौशल व संख्या पहचान का काम एक साथ किया। शुरुआती स्तर के बच्चों में से कुछ ने संख्या को सही नहीं लिखा। यानी, कुछ ने 40 को 04 लिखा, कुछ ने 12 को 21, वहीं कुछ ने 19 को 16 लिखा। और कुछ बच्चों ने केवल चित्र ही बनाए, चीज़ों के दाम नहीं लिखे। फिर भी इस बुनियादी समूह के ज़्यादातर बच्चों ने अनुमान लगाकर ही लिखा।

इन सभी बच्चों में सवाल बनाने को लेकर उत्साह दिखा, और कुछ बच्चों ने कहा कि सर, हमने 7 सवाल बनाए हैं, पर आपने कहा था 5 बनाना।

मध्य स्तर के समूह में शामिल ज़्यादातर बच्चों ने सवाल तो बनाए, लेकिन वे उन्हें स्पष्टता के साथ नहीं लिख पाए। इनके सवालों में एक ही तरह का पैटर्न था। सभी ने कुछ-कुछ इस प्रकार सवाल बनाए। जैसे– हमने 1 किलो आलू ख़रीदा 10 रुपए में और 1 किलो टमाटर 20 रुपए में, तो दुकानवाले को 30 रुपए देने होंगे। इन बच्चों ने ब्लैकबोर्ड पर दिखाए गए पैटर्न से मिलते-जुलते पैटर्न पर ही सवाल बनाए, साथ ही सवाल सिर्फ़ जोड़-घटाने की संक्रिया के ही थे।

कक्षा स्तर के बच्चों के सवालों में नयापन था। इन बच्चों ने लगभग सभी संक्रियाओं को अपने सवालों में शामिल किया था। इन बच्चों ने अपने सवालों के अन्त में स्पष्ट रूप से यह भी लिखा कि सवाल जोड़ का है या घटा का, और हल करते हुए चिह्नों का इस्तेमाल भी किया।

बच्चों ने बाज़ार की ख़रीदारी, त्योहार की ख़रीदारी, दुकान से ख़रीदारी, जन्मदिवस की ख़रीदारी, मेले में ख़रीदारी, आदि को लेकर बहुत रोचक सवाल बनाए थे। ऐसे सवाल अकसर पाठ्यपुस्तक में नहीं होते, और शिक्षक भी ऐसे सवाल नहीं बनाते।

बच्चों के इन सवालों में स्थानीय भाषा का भरपूर समावेशन था। मसलन, बच्चों ने सब्ज़ियों के नाम कुछ इस तरह से लिखे थे– पाताल (टमाटर), रमकेलिया (भिण्डी), मखना (कद्दू), केरा (केला), आदि। बनाए गए सवालों में अधिकांश बच्चों ने अपने दोस्तों के नाम को शामिल किया था। इससे यह बख़ूबी समझा जा सकता है कि बच्चे गणितीय अवधारणा को अपने जीवन और दैनिक दिनचर्या के साथ जोड़कर समझ पा रहे थे।

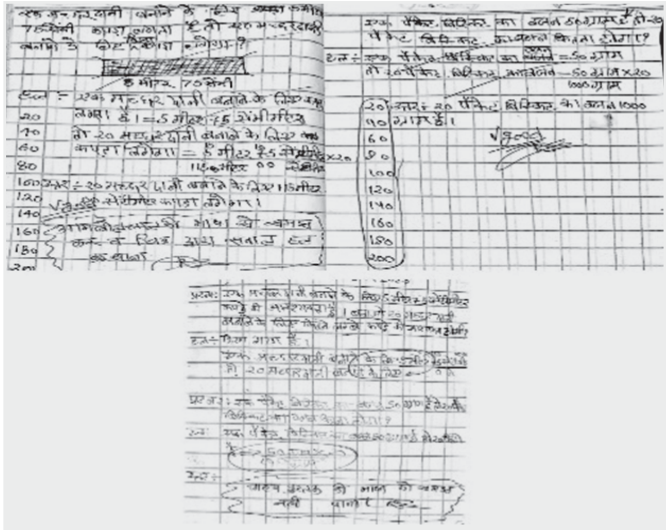

इस काम से मैं यह समझ पाया कि बुनियादी स्तर के बच्चों के साथ हमें क्या और कैसे काम करना है, और मध्य स्तर के बच्चों के साथ क्या और कैसे, साथ ही यह कि इस काम में कक्षा स्तर के बच्चे अपने साथियों की मदद कैसे कर सकते हैं।

बुनियादी और मध्य स्तर के बच्चों के साथ किया गया काम

चुनौतियों और समस्याओं को समझना : मैंने अनुभव किया है कि बच्चों के साथ संक्रिया को लेकर उनके दैनिक जीवन के उदाहरणों पर बातचीत आमतौर पर कक्षा में नहीं होती। मैंने ऊपर भी कहा है कि मैंने बच्चों से अधिक-से-अधिक बातचीत करने को अपनी योजना का हिस्सा बनाया। इसमें मैंने अनुभव किया था कि किसी सवाल हल करने के बच्चों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले तरीक़े अलग-अलग होते हैं। इसलिए कक्षा में अलग-अलग तरीक़ों पर सोचने के अवसर देने से बच्चों में कल्पना करने और अपने तर्क से कुछ नया करने की रुचि पैदा होगी।

बच्चों के साथ नियमित काम करते हुए मैं यह भी समझ पाया कि पाठ्यपुस्तक में जो गणितीय भाषा होती है उसे बच्चों को समझने में दिक़्क़त होती है। मैंने अपने काम में पहले बच्चों से आम बोलचाल की भाषा में एक सवाल पर बात की। मैंने पूछा, "एक मच्छरदानी बनाने के लिए 5 मीटर 75 सेंटीमीटर कपड़े की आवश्यकता है। बताओ, 20 मच्छरदानी बनाने के लिए कितने कपड़े की आवश्यकता होगी?" इसके बाद मैंने इसी सवाल को ऐसे रखा, "अगर आपके घर में एक मच्छरदानी बनाने के लिए आपके पापा 5 मीटर और 75 सेंटीमीटर कपड़ा लाते हैं। लेकिन आपके परिवार में 20 लोग हैं, और उन सभी के लिए अलग-अलग एक-एक मच्छरदानी बनवानी होगी। बताओ, आपके पापा को कितना कपड़ा लाना पड़ेगा?"

कुल मिलाकर, मेरा मानना है कि इबारती सवालों के सन्दर्भ में क्षमता विकसित करने के लिए आपके पास एक व्यवस्थित योजना होनी चाहिए। हरेक दिन की योजना पर काम करने के बाद शिक्षक को उसका विश्लेषण भी करना चाहिए। इससे शिक्षक को यह जानने में आसानी होगी कि उनके द्वारा बनाई गई योजना कक्षा में कितनी कारगर हुई, और बच्चे कक्षा शिक्षण की प्रक्रिया में कितना जुड़ पाए? इसमें इबारती सवालों पर सामान्य बातचीत करते हुए बच्चों के पूर्व ज्ञान को जानना, और अपनी योजना में

उसे स्थान देना काफ़ी मदद करता है। साथ ही अलग-अलग तरह के मौक़े देना भी मददगार होता है। मैंने कक्षा में कुछ इस तरह के मौक़े भी बनाए।

- बच्चों को चित्र देखकर एक ही तरह के (सन्दर्भ बदल-बदल कर) मौखिक और लिखित सवाल बनाने का नियमित अभ्यास करने के लिए कक्षा में पर्याप्त समय सुनिश्चित करना चाहिए। इसके साथ ही बच्चों द्वारा ख़ुद से बनाए गए सवालों को हल करने, और बड़े समूह में अपने सवालों को दूसरे बच्चों के साथ साझा करने के मौक़े कक्षा में देने चाहिए।
- बच्चों को सवाल को अलग-अलग तरीक़ों से और संक्रिया में बदलकर लिखने व हल करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।
- पाठ्यपुस्तक के सवाल को बार-बार पढ़ना, और बच्चों के दैनिक जीवन व परिवेश से जोड़कर उस सवाल पर चर्चा करनी चाहिए। इसके बाद सवाल को हल करने का अभ्यास करवाना चाहिए।

स्कूल में नियमित तौर पर आ रहे बच्चों द्वारा हल किए जा रहे, और बनाए जा रहे सवालों का विश्लेषण कर बच्चों की समस्या समझना चाहिए, और फिर उसके समाधान पर काम करना चाहिए।

निष्कर्ष

इबारती सवालों पर कक्षा शिक्षण के अनुभव के आधार पर मैं ये कह सकता हूँ कि कक्षा शिक्षण से पहले एक शिक्षक को अपनी कक्षा के बच्चों का आकलन करना ज़रूरी है। जब तक शिक्षक के पास हरेक बच्चे का आकलन नहीं हो, वह कक्षा शिक्षण में सही तरीक़े से शिक्षण प्रक्रिया नहीं अपना सकते।

दूसरी बात यह कि, शिक्षक को बिना शिक्षण योजना बनाए कभी भी कक्षा में नहीं जाना चाहिए। उसे यह तो पता होना ही चाहिए कि आज वह अपनी कक्षा में किस पाठ या अवधारणा पर काम करने जा रहा है; उसके लिए उपयुक्त गतिविधियाँ क्या होंगी; और उसकी उस गतिविधि को करवाने की तैयारी क्या है?

तीसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षक को नियमित रूप से अपने द्वारा किए जा रहे काम का ख़ुद के स्तर पर विश्लेषण करना चाहिए। इसके साथ ही हरेक बच्चे की कॉपी और उसके द्वारा कक्षा में की जा रही भागीदारी का विश्लेषण करना चाहिए। यह विश्लेषण बच्चे को केन्द्र में रखकर शिक्षक को उसकी शिक्षण योजना बनाने में मदद करता है।

अन्त में, कुछ महत्त्वपूर्ण बातें जिन्हें मैंने अपने कक्षा शिक्षण में प्राथमिकता में रखा है, वह हैं– बच्चों के अनुभवों को कक्षा में सन्दर्भ के तौर पर इस्तेमाल करना; बच्चों के परिवेश को शामिल करते हुए उनसे नियमित चर्चा करना; और इस धारणा से बाहर रहना कि मैं शिक्षक हूँ और कक्षा में, मैं जो करूँगा उसी से बच्चे सीखेंगे। शिक्षक को इस बात से अवगत रहना चाहिए कि कक्षा का कौन-सा बच्चा किस प्रक्रिया में लीडरशिप कर सकता है, और कौन कक्षा की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने व अपने साथियों की मदद करने में सहयोगी हो सकता है।

रेखराम साहू शासकीय प्राथमिक शाला कम्युनिटी हॉल स्कूल, संकुल केन्द्र गुढ़ियारी, रायपुर में सहायक शिक्षक के पद पर वर्ष 2014 से कार्यरत हैं। आपने एम कॉम किया है, और गणित आपके पसन्दीदा विषयों में से एक है। आप बच्चों के सीखने को लेकर प्रतिबद्ध हैं। आपकी कक्षा में 90 फ़ीसदी से ज़्यादा बच्चे अपनी कक्षा स्तर पर हैं।

सम्पर्क : rekhramsahu99@gmail.com

किशोरावस्था
शिक्षकों व शिक्षार्थियों के नज़रिए की पड़ताल

काजल सिंह

विज्ञान की पढ़ाई के दौरान किशोरावस्था में होने वाले जैविक, मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक बदलाव से जुड़े महत्त्वपूर्ण विषयों का अध्यापन हमेशा से बहुत समस्याप्रद रहा है। इस लेख में इन समस्याओं के कारणों को जानने और समाधान के रास्ते तलाशने के प्रयासों का विवरण शामिल है। इन प्रयासों में विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में किशोरावस्था से जुड़े विषयों की पठन सामग्री का विश्लेषण और संवाद के द्वारा विज्ञान पढ़ाने वाले शिक्षकों व किशोरवय विद्यार्थियों के दृष्टिकोणों को जाना समझा गया है।

इन प्रयासों से हासिल समझ के आधार पर शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ किशोरावस्था से जुड़े विषयों के शिक्षण की रणनीति व अध्यापन के बारे में लेख में विस्तार से बताया गया है। यह लेख पाठ्यपुस्तकों में किशोरावस्था से सम्बन्धित सामग्री की गुणवत्ता को सुधारने और शिक्षकों की तैयारी को बेहतर बनाने की बात भी करता है। -सं.

मिडिल स्कूलों में विज्ञान पढ़ाना मेरे लिए हमेशा एक सुखद अनुभव रहा है। विज्ञान शिक्षण के उद्देश्यों के बारे में अधिक सीखना, विषय के शिक्षणशास्त्र को समझना, और शिक्षकों के साथ इन मुद्दों पर चर्चा करना, मेरे काम के आवश्यक घटक रहे हैं। शिक्षक विज्ञान के विभिन्न तथ्यों, सिद्धान्तों व उनके इस्तेमाल के बारे में जानते हैं, और अधिक जानना भी चाहते हैं; पर उनमें से अधिकांश 'किशोरावस्था' से जुड़े कुछ विषयों के प्रति अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। उच्च प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों और उनके शिक्षकों के साथ हुए अनुभवों के आधार पर ऐसा लगता है कि इन कक्षाओं में आने पर बच्चों को अपने भीतर व परिवेश में कई बदलावों का सामना करना होता है। लड़कियाँ चुप रहने लगती हैं, और लड़के अकसर स्कूल से बाहर ही रहना पसन्द करते हैं। इस स्तर पर शिक्षकों की एक मुख्य चिन्ता लड़कों में नशीले पदार्थों का दुरुपयोग है। हालाँकि, लड़कियाँ नशा तो नहीं करतीं, पर जैसे-जैसे उनके शरीर में जैविक, शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक बदलाव होते हैं उन्हें उनसे जूझना होता है। इन बदलावों से सीखने में अचानक गिरावट आ सकती है। इस गिरावट में बच्चों के सामने आ रही अन्तर्निहित चुनौतियों

शिक्षक विज्ञान के विभिन्न तथ्यों, सिद्धान्तों व उनके इस्तेमाल के बारे में जानते हैं, और अधिक जानना भी चाहते हैं; पर उनमें से अधिकांश 'किशोरावस्था' से जुड़े कुछ विषयों के प्रति अनभिज्ञ प्रतीत होते हैं। उच्च प्राथमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों और उनके शिक्षकों के साथ हुए अनुभव के आधार पर ऐसा लगता है कि इन कक्षाओं में आने पर बच्चों को अपने भीतर व परिवेश में कई बदलावों का सामना करना होता है।

> एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि जो एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों पर स्थिति पत्र से है, वह यह है कि किसी कठिन अवधारणा को संक्षेप में, हलके-फुलके ढंग से प्रस्तुत करके, ग्रहण करने में सरल नहीं बनाया जा सकता। लेकिन अनेक पाठ्यपुस्तकों में अवधारणात्मक गहराई का अभाव ही होता है।

(उनमें आ रहे हारमोनल बदलाव, कक्षा साथियों से अन्तर्क्रिया, पढ़ाई का दबाव, आदि) को छोड़-सा दिया जाता है। इसके बावजूद, शिक्षक किशोरावस्था के बारे में अधिक नहीं सीखते। सवाल यह है कि यह सभी मुद्दे किशोरों के लिए उनके विज्ञान कोर्स का हिस्सा क्यों न हों। असल में, *एनसीएफ़एसई* यह कहता भी है, और इसके लिए उम्र के अनुसार उपयुक्त सामग्री की भी बात करता है। मिडिल स्कूल के विद्यार्थियों के साथ काम करने में उनमें हो रहे बदलाव व उनकी चुनौतियों पर गहराई से सोचने, और उन्हें पहचानने की आवश्यकता होती है। इस आयु वर्ग में इन गतिशील बदलावों को समझकर ऐसे वातावरण को बढ़ावा देना चाहिए जो सीखने का अनुकूल माहौल बनाकर समग्र विकास के मौक़े बना पाए। इससे अकादमिक शिक्षा ही नहीं, किशोरावस्था के इस चरण के दौरान आवश्यक जीवन कौशल, दृढ़ संकल्प और आत्मजागरूकता का विकास भी हो सकता है। कुछ पाठ्यपुस्तकें किशोरावस्था के दौरान होने वाले गहन बदलावों के बारे में बात करती भी हैं, लेकिन कक्षाओं में इनका कार्यान्वयन इस महत्त्वपूर्ण अनुभव की चर्चा को रटने में बदल देता है। शिक्षक इस दौरान विद्यार्थियों के साथ उनके अपने अनुभवों और चिन्ताओं पर चर्चा के अवसर को नज़रन्दाज़ कर परीक्षा-उन्मुख उद्देश्यों को प्राथमिकता देते हैं। यह आवश्यक है कि स्कूल को ऐसे माहौल को बढ़ावा देना चाहिए जो खुले संवाद, सहानुभूति के साथ आने वाली भावनात्मक व विकासात्मक चुनौतियों की समझ को प्रोत्साहित करे।

पाठ्यपुस्तकों की सामग्री और किशोरावस्था की जटिलताएँ

इस मुद्दे को समझने के लिए, मैंने पहले विभिन्न पाठ्यपुस्तकों की समीक्षा की। इससे मैं विविध दृष्टिकोण इकट्ठा कर पाई। एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि जो *एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों पर स्थिति पत्र* से है, वह यह है कि किसी कठिन अवधारणा को संक्षेप में, हलके-फुलके ढंग से प्रस्तुत करके, ग्रहण करने में सरल नहीं बनाया जा सकता। लेकिन अनेक पाठ्यपुस्तकों में अवधारणात्मक गहराई का अभाव ही होता है। कई पाठ्यपुस्तकें एक दूसरे की कॉपी-सी लगती हैं, और ये पढ़ने वालों को ध्यान में रखकर भी नहीं बनाई गई हैं। कुछ पाठ्यपुस्तकें समसामयिक मुद्दों पर चर्चा करती हैं, और कुछ हद तक वर्तमान वास्तविकताओं को भी दर्शाती हैं। ये पाठ्यपुस्तकें संवेदनशील विषयों के लिए सीधे समाधान नहीं देतीं, बल्कि प्रश्नों, समाचार रिपोर्टों और प्रासंगिक परिदृश्यों के माध्यम से सोचने के मौक़ों के साथ-साथ शिक्षकों और शिक्षार्थियों, दोनों को चर्चा करने, अनुभव साझा करने और उनसे सीखने के मौक़े देती हैं। ऐसे विषय उन क्षेत्रों में विशेष रूप से फ़ायदेमन्द हो सकते हैं जहाँ किशोरों में अत्यधिक धूम्रपान, शराब की लत, कम उम्र में शादी और गर्भाधान जैसी परिस्थितियाँ दिखती हैं। दुर्भाग्य से, कई पाठ्यपुस्तकें ऐसे सार्थक और ज़रूरी प्रश्न उठाने की बजाय इन विषयों को केवल संक्षेप में छूते हुए छोड़ देती हैं।

किशोरावस्था-विषयक अध्याय पढ़ाने पर शिक्षकों का दृष्टिकोण

कक्षा में किशोरों के साथ इन विषयों पर सार्थक बातचीत हो पाए, इसकी सबसे महत्त्वपूर्ण कड़ी शिक्षक हैं। शिक्षक इन मुद्दों पर क्या

सोचते हैं? इसे समझने के लिए, मैंने 9 शिक्षकों (4 महिला और 5 पुरुष शिक्षक; उम्र लगभग 32 से 37 वर्ष; कम-से-कम 4 वर्ष का मिडिल स्कूल में पढ़ाने को अनुभव) से बात करने का निर्णय लिया। कुछ शिक्षकों ने चर्चा से बचने की कोशिश की, और अन्ततः 7 शिक्षकों (3 महिला और 4 पुरुष) ने न केवल स्वेच्छा से अपनी समझ साझा की, बल्कि मेरी मदद भी की ताकि मैं विद्यार्थियों के साथ सहज हो पाऊँ। पहली महत्त्वपूर्ण बात जो मुझे पता चली, वह यह थी कि विज्ञान की पाठ्यपुस्तकों में इस विषय की शुरुआत 2019 में हुई। मुझसे कुछ शिक्षक इस विषय पर बात कर पाए क्योंकि इन पुस्तकों के आने के बाद पिछले दो वर्षों से धीरे-धीरे कक्षा में इस विषय पर उनकी झिझक कुछ हद तक कम हुई थी। इससे लगता है कि यदि पाठ्यपुस्तक एक मार्गदर्शक दस्तावेज़ के रूप में वास्तविक व वैज्ञानिक है और जानकारी प्रासंगिक व शिक्षणशास्त्र-आधारित है तो यह शिक्षकों की झिझक दूर कर सकती है। ऐसी पुस्तक शायद विद्यार्थियों तक भी बातों को पहुँचा सकती है। इस प्रकार, महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रीय-वैज्ञानिक विषयों को रटने की जगह एक बेहतर शिक्षित विद्यार्थी की ओर बढ़ना सम्भव हो सकता है।

जब इन मुद्दों के लिए शिक्षकों की तैयारी और कक्षा योजना के बारे में पूछा गया तो यही समझ आया कि पाठ्यपुस्तक विषय की तैयारी में एक प्राथमिक संसाधन है। कुछ शिक्षकों ने यह भी कहा कि निषेचन प्रक्रिया जैसी कुछ अवधारणाओं के लिए वे यूट्यूब और दूसरे सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्म का उपयोग करते हैं। वे इन विषयों पर अपने साथियों के साथ चर्चा बहुत कम ही करते हैं। यदि वे चर्चा करते भी हैं तब महिला शिक्षक, महिला सहकर्मियों से, और पुरुष शिक्षक, पुरुष सहकर्मियों से इन विषयों पर बात करते हैं। यह कहा जा सकता है कि इन विषयों पर मार्गदर्शन प्रदान करने के लिए उचित सामग्री व समर्थन की कमी एक बड़ी चुनौती है। ज़मीनी स्तर पर शिक्षकों के एक साथ मिलने के अवसर सीमित हैं और उनमें हिचक भी है। इसके परिणामस्वरूप सीखना मुश्किल हो रहा है। इन विषयों पर व्यापक साझा मान्यता यही है कि ये विषय विज्ञान शिक्षा का महत्त्वपूर्ण पहलू नहीं हैं। एक शिक्षिका का कहना था कि परेशानी का एक कारण पाठ्यपुस्तकों में अधूरी जानकारी हो सकता है। उन्होंने कहा कि इस अवधि के दौरान लड़कों और लड़कियों, दोनों के शरीर में व्यापक बदलाव होते हैं, लेकिन कई उपलब्ध पाठ्यपुस्तकें केवल लड़कों में बदलाव दिखाती हैं, और लड़कियों के बारे में कुछ नहीं कहतीं। यहाँ तक कि, मासिक धर्म के दौरान लड़कियों की परेशानी के बारे में जानकारी कुछ पाठ्यपुस्तकों में थी, लेकिन बाक़ियों में यह पूरी तरह से ग़ायब थी। कुछ शिक्षकों ने कहा कि पाठ्यपुस्तकों में इन मुद्दों के होने से ऐसे विषयों पर कक्षाओं में चर्चा करने में उनका आत्मविश्वास बढ़ा है।

कक्षा वातावरण

शिक्षक खुले और सहज वातावरण में किशोरावस्था पर चर्चा करने की बात करते हैं। विद्यार्थी अपने शारीरिक विकास व बदलावों के सन्दर्भ में हो रही चर्चा से जुड़ें, इसलिए वे शरीर और मानसिक अवस्था में हो रहे बदलावों और

यदि पाठ्यपुस्तक एक मार्गदर्शक दस्तावेज़ के रूप में वास्तविक व वैज्ञानिक है और जानकारी प्रासंगिक व शिक्षणशास्त्र- आधारित है तो यह शिक्षकों की झिझक दूर कर सकती है। ऐसी पुस्तक शायद विद्यार्थियों तक भी बातों को पहुँचा सकती है। इस प्रकार, महत्त्वपूर्ण समाजशास्त्रीय-वैज्ञानिक विषयों को रटने की जगह एक बेहतर शिक्षित विद्यार्थी की ओर बढ़ना सम्भव हो सकता है।

प्रभावों के उदाहरण लेकर बातचीत करते हैं। इस सन्दर्भ में एक शिक्षक के कथन को मैं अपने शब्दों में रख रही हूँ। उनका कहना था, “मेरा दृष्टिकोण यह है कि ख़ुद के शरीर को, और स्व (सेल्फ़) को समझना महत्त्वपूर्ण है। यह समझ न केवल अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य, बल्कि मानसिक ख़ुशहाली के लिए भी अहम है। कुछ उदाहरणों के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि निश्चित अवधियों पर होने वाले शारीरिक बदलावों के कारणों के बारे में अनभिज्ञ रहने से भ्रम, चिन्ता व असुरक्षा पैदा हो सकती है, और इनका मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।”

कुछ शिक्षकों का कहना था कि सोशल मीडिया प्लेटफ़ॉर्मों पर भरोसा करने से नुक़सान होता है। वे इस विषय पर सटीक जानकारी के लिए पाठ्यपुस्तकों, स्कूल, कक्षाओं, सहपाठियों और शिक्षकों की भूमिका के सकारात्मक निहितार्थों पर चर्चा करते हैं। वे इसे ही ‘आदर्श सेटिंग’ मानते हैं। लेकिन शिक्षकों ने ऐसे कई वाक़िए भी बताए जब शिक्षण के दौरान कक्षाओं में स्त्री-पुरुष के प्रजनन अंगों को दर्शाने वाले पोस्टर प्रदर्शित करने पर आपत्ति की गई। एक स्कूल के विज्ञान ऐसे विभिन्न चित्र लगाए गए थे, लेकिन समुदाय की भावनाएँ आहत न हों इसलिए वहाँ शिक्षक ने वे पोस्टर हटावा दिए।

एक शिक्षक का कथन, “मेरा दृष्टिकोण यह है कि ख़ुद के शरीर को, और स्व (सेल्फ़) को समझना महत्त्वपूर्ण है। यह समझ न केवल अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य, बल्कि मानसिक ख़ुशहाली के लिए भी अहम है। कुछ उदाहरणों के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि निश्चित अवधियों पर होने वाले शारीरिक बदलावों के कारणों के बारे में अनभिज्ञ रहने से भ्रम, चिन्ता व असुरक्षा पैदा हो सकती है, और इनका मानसिक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।”

पूर्व तैयारी

इस विषय और इसके शिक्षणशास्त्र को गहराई से समझने की इच्छा के कारण, मैंने कक्षा 8 के विद्यार्थियों को पढ़ा रहे सात अलग-अलग स्कूलों के शिक्षकों के साथ एक योजना सत्र शुरू किया। इन स्कूलों के शिक्षकों ने इस काम के दौरान मेरी मदद भी की।

प्रारम्भिक तैयारी में सभी सात शिक्षकों की एक बैठक हुई। बैठक में इस विषय पर कक्षा में विद्यार्थियों की सार्थक सहभागिता पर चर्चा हुई। अधिकांश सुझाव प्रासंगिक उदाहरणों के माध्यम से जानकारी देने पर केन्द्रित थे। इनमें विद्यार्थियों के लिए अपनी समझ और चिन्ताओं को व्यक्त करने हेतु बेहद कम जगह थी। विद्यार्थियों को शामिल करने के विचार का विरोध था, इसलिए इस मसले को व्यक्तिगत स्तर पर अलग अप्रोच से हल करने का फ़ैसला किया गया। योजना के दूसरे दौर में, मैंने प्रत्येक शिक्षक के साथ स्कूल में एक-एक करके चर्चा की, और इंटरैक्टिव सत्रों वाली एक योजना विकसित की। इसमें विद्यार्थियों के पढ़ने और विचार करने के लिए उनके ही गाँवों से केस स्टडीज़, वीडियो स्क्रीनिंग और मितानिन जैसे स्थानीय हितधारकों के साथ इंटरैक्टिव सत्र, समूह चर्चाएँ, आदि किया जाना शामिल था। इनमें विद्यार्थी अपनी भावनाओं और विचारों को साझा कर सकते थे। इन सभी सत्रों को शिक्षकों ने ख़ूब सराहा, लेकिन समय की कमी पर चिन्ता व्यक्त की। उन्होंने सवाल किया कि क्या केवल इस विषय के लिए इतना समय दिया जाना चाहिए! साथ ही जब यह बात हुई कि कक्षा में भी यह चर्चा करनी हैं। तब एक अन्य शिक्षक ने भी इसमें शामिल होने से इंकार कर दिया।

मौजूदा ज्ञान और आगामी विषयवस्तु में जुड़ाव

शिक्षार्थियों और शिक्षकों के साथ कई दौर की बातचीत के बाद मुख्य रणनीति बनाई गई। विद्यार्थी जो विषयवस्तु पढ़ चुके थे, उसपर चर्चा

The story about the stomach with the hole

Till about 200 years ago scientists did not know what happened to food once it reached the stomach, since it was not possible to peep into the stomach. Then a surprising but interesting incident happened. In 1822 a soldier called Martin was hit by a bullet and brought to Dr Boman. He treated Martin and his wound was healed but an interesting thing happened – a hole was formed in the stomach. Through that hole it was possible to remove food from the stomach using a pipe. Martin did not suffer any problem due to the hole and he remained healthy.

Dr Boman continued to conduct experiments through the hole for nine long years to understand the process of digestion. He first removed the gastric juice from the stomach into a small bottle and put various food stuffs in it. He saw that the food stuff got dissolved in the gastric juice. He realized that there was a chemical reaction between the food and the gastric juice and that it could be carried out even outside the stomach.

You may have understood now that the digestive process is no magic.

शुरू करनी थी। उदाहरण के लिए, हम पाचन तंत्र पर बातचीत के बाद मासिक धर्म और निषेचन प्रक्रिया पर आए। कक्षा 6 में पढ़ी गई कहानी 'A Stomach with a Hole' सुनाकर बात शुरू की। यह कहानी पाचन तंत्र के अंगों और उनकी कार्यप्रणाली पर आधारित है। इसके बाद, परिसंचरण, श्वसन और उत्सर्जन तंत्रों पर चर्चा हुई। यह रेखांकित किया गया कि इन प्रणालियों की समझ दैनिक जीवन में कैसे फ़ायदेमन्द होती है। इसने प्रजनन प्रणाली, उसके अंगों और प्रक्रियाओं पर विचार करने का मार्ग प्रशस्त किया। हमने इस विषय पर झिझक के अन्तर्निहित कारणों पर बातचीत के साथ इस प्रणाली पर स्वाभाविकता से विचार व चर्चा का प्रयास किया।

चर्चा इस प्रकार थी

मासिक धर्म पर चर्चा लड़के और लड़कियों, दोनों को ही ख़ास समझ नहीं आई थी, और मितानिन की भागीदारी से भी अपेक्षित परिणाम नहीं मिले। तब हमने रणनीति में बदलाव करते हुए पौधों में– नर और मादा प्रजनन अंगों– से बातचीत शुरू करने का फ़ैसला किया, जिससे जानवरों में प्रजनन से कुछ समानता बनाई जा सके।

विज्ञान शिक्षण में चित्रों का उपयोग हमेशा अर्थपूर्ण और आकर्षक रहता है। इसलिए हमने पौधों के प्रजनन अंगों के चित्रों और उनके विश्लेषण से शुरुआत की, और तब नर एवं मादा जानवरों के प्रजनन अंगों के चित्रों पर तुलनात्मक चर्चा का प्रयास किया।

शुक्राणु निर्माण प्रक्रिया पर चर्चा ने पुरुष प्रजनन अंगों के कामकाज समझने को आसान बनाया, और तब हमने पाठ्यपुस्तक की विषयवस्तु का क्रम बदलते हुए महिला प्रजनन अंगों पर बात की। निषेचन नहीं होने पर क्या होता है; और निषेचन हो जाने पर क्या? इन प्रश्नों पर बात करते हुए मासिक धर्म के मुद्दे को समझा।

विद्यार्थियों के साथ हुए अनुभव

कक्षा में खुली चर्चा के लिए अनुकूल माहौल बनाने को प्राथमिकता दी गई। विद्यार्थियों में आपसी विश्वास बने, और उनके व शिक्षकों के बीच भी विश्वास पनपे, यह प्रयास किया गया। किशोरों में

> शिक्षिका ने माना कि अगर बात करने के लिए कोई महिला शिक्षक होती तो लड़कियाँ अधिक सहज महसूस करतीं। हालाँकि, विषय को एक फ़र्क़ तरीक़े से सम्बोधित करने के बाद सकारात्मक बदलाव दिखा। कुछ लड़कियों ने मासिक धर्म के दौरान असहज महसूस होने पर शिक्षकों से बात की, और छुट्टी का अनुरोध किया।

शारीरिक बदलाव पर दो दिन 45-45 मिनट की कक्षाओं में गहराई से विचार किया गया था। इस संवाद में हमने पाया कि लड़के और लड़कियाँ, दोनों ही असुरक्षाओं से जूझते हैं। इनसे उनका आत्मविश्वास कम हो जाता है। मैंने विद्यार्थियों के साथ अपने बचपन की उन घटनाओं को भी साझा किया जहाँ ऐसे ही बदलावों के चलते मुझे भी आत्मविश्वास की कमी महसूस हुई, और ख़ुद पर सन्देह होने लगा था। इसके चलते मैंने कई अवसर भी गँवाए। फिर कुछ शिक्षकों ने भी अपने ऐसे अनुभव साझा किए। इस तरह, विद्यार्थियों को इस विषय पर अपने विचार साझा करने के लिए हम प्रेरित कर पाए।

विद्यार्थियों के साथ पुरुष और महिला प्रजनन अंगों के बारे में बातचीत करना चुनौतीपूर्ण था। शुरुआत इससे हुई कि इनके बारे में जानना व सीखना क्यों अहम है। इस प्रश्न पर बच्चों की प्रतिक्रियाएँ भविष्य के कैरियर के लिए ज्ञान प्राप्त करने के इर्द गिर्द ही थीं, ख़ासकर उनके लिए जो चिकित्सा व्यवसाय में जाने का सोच रहे थे। चर्चा ने अर्जित ज्ञान और वास्तविक जीवन के मुद्दों के बीच सम्बन्ध की आवश्यकता को उभारा। हमने गाँवों की केस स्टडीज़ को लेकर चर्चा को दिशा दी। इसमें महिलाओं में गम्भीर संक्रमण, ट्यूमर, अक्रियाशील गर्भाशय, रक्तस्राव और गर्भपात के कारणों के लिए भ्रूण सम्बन्धी विसंगतियों के उदाहरणों पर प्रकाश डाला गया। इस दृष्टिकोण ने इस विषय पर अधिक विशिष्ट और सूक्ष्म चर्चा को काफ़ी आसान बना दिया।

स्वास्थ्य विभाग का अमला साल में लगभग 5-6 बार स्कूल का नियमित दौरा करता है। हमने सामुदायिक स्वास्थ्यकर्ता को मासिक धर्म पर चर्चा करने के लिए आमंत्रित किया। तैयारी के लिए हुई बातचीत में उन्होंने लड़कों को शामिल करने के लिए मना करते हुए केवल लड़कियों से बातचीत करने को कहा। इस अनुभव से मुझे इस बात का महत्त्व समझ आया कि विद्यार्थियों से पहले शिक्षकों और सामुदायिक कार्यकर्ताओं के साथ इस मुद्दे पर समझ बनाना ज़रूरी है। बच्चे अन्ततः स्कूल के बाद समाज में ही लौटते हैं, इसलिए यह ज़रूरी है कि समाज में भी इन मुद्दों पर बातचीत करने की जगह बने। मेरे लिए यह चुनौती है। वर्तमान में, इस स्कूल में मुख्य शिक्षक के साथ इस काम को जारी रखा जा रहा है, और इन चुनौतियों का समाधान करने और उनसे निपटने हेतु अगले तीन महीनों के लिए समुदाय के साथ काम करने पर केन्द्रित एक परियोजना शुरू की गई है।

शिक्षार्थियों की यादगार प्रतिक्रियाएँ

जब शिक्षक बच्चों के अनुभवों पर आधारित नए उदाहरण बनाने का प्रयास कर रहे थे तब बच्चों ने प्रस्तुत विषयों को गहराई से जानने में रुचि दिखाई, और अपनी प्रतिक्रियाएँ भी दीं। निषेचन और युग्मनज निर्माण पर चर्चा के दौरान, कुछ बच्चों की जुड़वाँ बनने की प्रक्रिया जानने में रुचि थी। इसी तरह, जब शिक्षक ने गुणसूत्रों के आधार पर बच्चे के लिंग का निर्धारण समझाया तो एक बच्चे ने 'तीसरे लिंग' की अवधारणा का सवाल उठाया। एक अन्य उदाहरण में, जैसे ही शिक्षक ने किशोरावस्था के दौरान भावनात्मक ख़ुशहाली पर चर्चा की, एक बच्चे ने अपने गाँव में किशोरों के शादी करने के लिए घर से भाग जाने के बारे में चिन्ता व्यक्त की, और ऐसे कार्यों की तर्कसंगतता पर स्पष्टीकरण चाहा।

एक शिक्षक ने भी अपना एक अनुभव साझा किया। इसमें एक स्कूल स्टाफ़, जिसमें सिर्फ़ पुरुष शिक्षक ही थे, को छात्राओं को उनके मासिक धर्म के दौरान आने वाली चुनौतियों का समाधान करने के लिए संघर्ष करना पड़ा था। लम्बे समय तक लड़कियाँ अपनी कठिनाइयों को साझा करने में झिझकती थीं। इस कारण ऐसी स्थितियाँ पैदा हो जाती थीं कि वे बिना किसी को बताए बीच में ही स्कूल छोड़ देती थीं। कुछ लड़कियाँ कक्षाओं के दौरान रोतीं भी, लेकिन चल रही चर्चाओं के बावजूद अपनी समस्याओं के बारे में खुलकर बात करने से बचतीं। बातचीत से पता चला कि कुछ छात्राएँ दर्द और ऐंठन के लिए बेतरतीब तरीक़े से दवाएँ ले रही थीं जिनसे स्वास्थ्य जोख़िम पैदा हो गया था। यहाँ स्वच्छता भी एक महत्त्वपूर्ण चिन्ता थी, क्योंकि समुदाय में सेनेटरी पैड की जगह कपड़े का उपयोग आम था।

शिक्षिका ने माना कि अगर बात करने के लिए कोई महिला शिक्षक होती तो लड़कियाँ अधिक सहज महसूस करतीं। हालाँकि, विषय को एक फ़र्क़ तरीक़े से सम्बोधित करने के बाद सकारात्मक बदलाव दिखा। कुछ लड़कियों ने मासिक धर्म के दौरान असहज महसूस होने पर शिक्षकों से बात की, और छुट्टी का अनुरोध किया। इसके साथ ही, ज़रूरत पड़ने पर स्कूल में पैड माँगना भी शुरू किया। इस बदलाव ने संकेत दिया कि सही दृष्टिकोण के साथ, महिला कर्मचारियों की अनुपस्थिति में भी सहायक वातावरण बनाना सम्भव है। हालाँकि, शिक्षक भी मानते हैं कि शिक्षार्थियों की ओर से सकारात्मक और विचारशील प्रतिक्रियाओं की संख्या सीमित है। कई विद्यार्थी अभी भी इस विषय पर चर्चा में शामिल होने में अनिच्छा प्रदर्शित करते हैं, वहीं कुछ इसे मनोरंजन का स्रोत मानते हैं, और इसमें गम्भीरता से नहीं जुड़ते।

विभिन्न शिक्षार्थियों की प्रतिक्रियाओं पर मनन करते हुए एक अन्तर्दृष्टिपूर्ण समझ बनी। शिक्षकों के सामने प्रश्न था (जब सहजता का वातावरण बन गया था), “क्या वे अपने बच्चों के साथ इस विषय पर बातचीत में संलग्न हो सकते हैं?” हालाँकि प्रतिक्रियाएँ बहुत सकारात्मक नहीं थीं। लेकिन उन्होंने एक सामान्य दृष्टिकोण साझा किया कि इस विषय को मुख्य रूप से स्कूल स्तर पर सम्बोधित किया जा सकता है। उन्होंने स्वीकार किया कि जब उनके बच्चे जिज्ञासु होते हैं तब ही वे इन मामलों पर ध्यान देते हैं।

इस अनुभव ने एक अमिट छाप छोड़ी, और इस अवलोकन को उजागर किया कि सीखने का महत्त्व कक्षा की सीमाओं से परे नहीं जाता है। शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों को समझने के लिए शिक्षकों के पाठ्यक्रम से परे जाने के महत्त्व पर भी ज़ोर दिया गया।

इन कठिन प्रासंगिक मुद्दों का दूसरा उदाहरण है– “नशीले पदार्थों को कहें ना”।

17.9 Say "No" to Drugs -

Adolescence is a period of much activity in the body and mind which is a normal part of growing up. So do not feel confused or insecure. If anybody suggests that you will get relief if you take some drugs, just say "No" unless prescribed by the doctor. Drugs are addictive, if you take them once you will feel like taking them again and again. They harm the body in the long run. They ruin health and happiness.

You must have heard about AIDS which is caused by a dangerous virus, HIV. This virus can pass on to a normal person from an infected person by sharing the syringes used for injecting drugs. It can also be transmitted to an infant from the infected mother through her milk. The virus can also be transmitted through sexual contact with a person infected with HIV.

> विज्ञान शिक्षा को विद्यार्थियों को सामाजिक असमानता को क़ायम रखने वाली सामाजिक मान्यताओं, धारणाओं और प्रथाओं पर सवाल उठाने के लिए सशक्त बनाना चाहिए। इसलिए शिक्षकों को इन विषयों के महत्त्व को मझाना, और उनके लिए मज़बूत तंत्र के विकास के माध्यम से उन्हें सशक्त बनाने के रास्ते तलाशना महत्त्वपूर्ण है।

शिक्षकों ने सर्वसम्मति से इस मसले पर बातचीत का निर्णय लिया। "धूम्रपान– क्या करें और क्या न करें" के पारम्परिक तरीक़े की बजाय हमने इंटरैक्टिव बातचीत की। इसके लिए हमने विद्यार्थियों को अलग-अलग समूहों में बाँटा, और उन्हें समुदाय के सदस्यों, विशेषकर परिवारों के चयनित सदस्य, का व्यक्तिगत साक्षात्कार लेने को कहा गया। विद्यार्थियों को अपने गाँव के स्वास्थ्य केन्द्र के सदस्यों से बातचीत के लिए भी प्रोत्साहित किया गया। इस प्रयास का उद्देश्य ऐसे मसलों पर सार्थक सहकर्मी चर्चाओं को बढ़ावा देना, और धूम्रपान व नशीली दवाओं के असर पर समझ बनाना था।

अन्त में

व्यक्तिगत तौर पर कई पहलुओं पर, अभी भी कुछ सवाल हैं। मसलन,

- क्या हम शिक्षकों की यूट्यूब या सोशल मीडिया पर निर्भरता की बजाय उन्हें प्रामाणिक व उपयुक्त पठन सामग्री दे सकते हैं, और उन्हें शोध के व्यवहारिक अन्वेषण में शामिल होने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं? आदि।
- क्या हमारी पाठ्यपुस्तकों में ऐसे विषयों की सामग्री की गुणवत्ता बढ़ाने की सम्भावना है?
- क्या हम शिक्षकों को इन विषयों को गहराई से समझने के लिए सशक्त और प्रेरित कर सकते हैं?

विज्ञान शिक्षा को विद्यार्थियों को सामाजिक असमानता को क़ायम रखने वाली सामाजिक मान्यताओं, धारणाओं और प्रथाओं पर सवाल उठाने के लिए सशक्त बनाना चाहिए। इसलिए शिक्षकों को इन विषयों के महत्त्व को समझाना, और उनके लिए मज़बूत तंत्र के विकास के माध्यम से उन्हें सशक्त बनाने के रास्ते तलाशना महत्त्वपूर्ण है।

काजल सिंह वर्ष 2021 से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में काम कर रही हैं। वर्तमान में धमतरी ज़िले के कुरूद ब्लॉक में कार्यरत हैं। आपकी विज्ञान शिक्षण और इसकी अधिगम प्रक्रियाओं को समझने में गहरी रुचि है। वे अपने शिक्षण अनुभवों को लिखकर अपने साथियों से साझा करती हैं और प्रकाशन के लिए पत्र-पत्रिकाओं में भेजती रहती हैं।

सम्पर्क : kajal.singh@azimpremjifoundation.org

धाराप्रवाह पठन

रविशेखर वर्मा

यह लेख पढ़ना सीखने की प्रक्रिया में धाराप्रवाह पठन कौशल के बारे में है। इसमें बताया गया है कि बच्चे धाराप्रवाह पढ़ना सीखने से ज़्यादा उद्देश्यपूर्ण पढ़ने के लिए उत्सुक होते हैं। इस प्रकार पढ़ने से वे स्वतंत्र पाठक के रूप में विकसित होते हैं। सही अर्थों में धाराप्रवाह पठन क्या है; इसमें पढ़ने से जुड़ी क्या-क्या चीज़ें शामिल हैं; इसे सीखने के लिए किस तरह के पठन अभ्यास प्रभावी हो सकते हैं; आदि के बारे में विस्तार से बात की गई है। इस बातचीत में उदाहरण के तौर पर एक कक्षा में की गई गतिविधि-आधारित प्रक्रियाओं का चरणवार विवरण भी प्रस्तुत किया गया है। इन गतिविधियों में कहानी, नाटक, कविता, संवाद जैसी विधाओं पर किए गए कार्य के ब्योरे शामिल हैं। -सं.

भाषा की प्रारम्भिक कक्षाओं में धाराप्रवाह पठन विकसित करने के लिए अलग से कोई शिक्षण योजना नहीं होती है। आमतौर पर यह मान लिया जाता है कि अक्षर पहचानने और अक्षरों को जोड़कर शब्द बनाना सीख लेने से धाराप्रवाह पठन आ ही जाएगा। इस मान्यता के कारण अधिकांश बच्चे स्व-प्रेरित स्वतंत्र पाठक के रूप में विकसित होने से वंचित रह जाते हैं।

पढ़ना एक उद्देश्यपूर्ण कार्य है। पाठक अलग-अलग पाठ, अलग-अलग उद्देश्य से पढ़ते हैं। पढ़ने का कोई भी उद्देश्य समझ के बिना पूरा नहीं हो सकता है। जब बच्चे समझकर पढ़ते हैं, उन्हें पाठ को आनन्द के साथ पढ़ पाने की सफलता का आनन्द भी मिलता है। उनकी यही सफलता उन्हें और ज़्यादा पढ़ने के लिए प्रेरित करती है, और वे स्वतंत्र पाठक के रूप में विकसित होते हैं।

प्रारम्भिक कक्षाओं में बच्चों को अटक-अटक कर, एक-एक अक्षर पर समय लेते पढ़ते हुए आपने भी देखा होगा– ए... क... 'एक', स... म... य... 'समय', क में ई की मात्रा 'की', ब में आ की मात्रा बा... त... 'बात', ह में ऐ की मात्रा 'है', आदि। इस तरह पढ़ने से समझने का लक्ष्य पूरा नहीं होता क्योंकि बच्चे की सारी संज्ञानात्मक ऊर्जा वर्ण पहचानने और ध्वनि से सम्बन्ध जोड़ने में ही ख़र्च हो जाती है, और

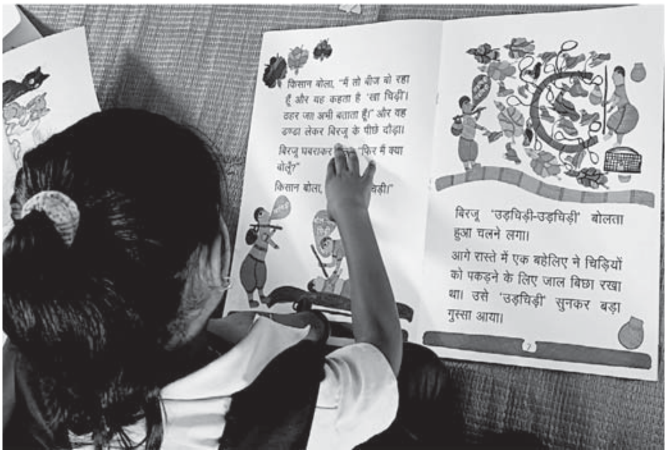

अजय सैनी, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई

चित्र : हीरा धुर्वे

तब पाठ समझने के लिए ऊर्जा ही नहीं बचती। यदि बच्चा स्वचालितता (automaticity) के साथ पढ़ ले, अर्थात शब्द को बिना किसी परिश्रम के सटीकता के साथ स्वतः ही पहचान ले तो शब्द पहचानने में ख़र्च होने वाली इस ऊर्जा को वह पाठ समझने में लगा सकता है। स्वचालितता के अभाव में बच्चे को एक-एक अक्षर को हिज्जे करके पढ़ना पड़ता है। ऐसा पठन बच्चों को थका देने वाला होता है, और इससे उनमें पढ़ने के प्रति विरक्ति बहुत जल्दी पैदा हो जाती है।

जब हम किसी बात को सुनते हैं तो अर्थ केवल उन ध्वनि समूहों में ही निहित नहीं होता है बल्कि सन्दर्भ के साथ-साथ बोलने वाले का हावभाव, लहज़ा, ध्वनियों का उतार-चढ़ाव, आदि बातें भी अर्थ निर्माण में सहायता करती हैं। ध्वनियाँ हमारे कानों में टुकड़ों में नहीं बल्कि एक प्रवाह में एक साथ पड़ती हैं। यदि लिखित भाषा को वैसा नहीं पढ़ा जाए जैसा कि बोला जाता है तो अर्थ समझना मुश्किल हो जाता है। इसीलिए धाराप्रवाह पठन या स्वचालितता के अभाव में अक्षर-दर-अक्षर पढ़ने से हावभाव, लय और ध्वनियों के उतार-चढ़ाव के साथ पढ़ना सम्भव नहीं हो सकता है।

धाराप्रवाह का अर्थ तेज़ गति से पढ़ना नहीं है। समझ तेज़ गति के साथ पढ़ने से सुनिश्चित नहीं होती है। इस सम्बन्ध में वुडी एलन का एक चर्चित मज़ाक़ तेज़ गति से पढ़ने की व्यर्थता की ओर इशारा करता है : “मैंने तेज़ी से पढ़ने की स्पर्धा में भाग लिया, और *वॉर एंड पीस* पुस्तक को 20 मिनट में पढ़ लिया। यह रूस पर आधारित है।” तेज़ गति की बजाय यदि प्रभावी गति, शुद्धता और हावभाव के साथ *वॉर एंड पीस* को पढ़ा जाए तो निश्चय ही ‘यह रूस पर आधारित है’ से कहीं ज़्यादा समझ हम बना पाएँगे। यह कथन किसी भी रचना पर लागू हो सकता है। कोई कह सकता है कि मैंने ‘ईदगाह’ कहानी को 2 मिनट में पढ़ लिया। यह हामिद और उसकी दादी के बारे में है। लेकिन हम जानते हैं कि कहानी बहुत कुछ कहती है। इस तरह धाराप्रवाह पठन में दो चीज़ें शामिल हैं :

शब्द पहचान और स्वचालितता, यानी शुद्धता के साथ शब्द को बिना परिश्रम के तुरन्त पहचानना; और

प्रभावी गति, समझ और हावभाव के साथ पढ़ना।

बच्चों में धाराप्रवाह पठन कौशल विकसित करने के लिए दो प्रकार के पठन अभ्यास प्रभावी सिद्ध हो सकते हैं :

1. गहन पठन

गहन पठन का अभिप्राय किसी पाठ को बार-बार पढ़ने से है। बच्चा किसी पाठ को अलग-अलग उद्देश्य के तहत बार-बार तब तक पढ़ता है जब तक कि वह धाराप्रवाह पठन के एक वांछित स्तर को प्राप्त न कर ले। यह

प्रक्रिया नीरस और उबाऊ न बने, इसके लिए शिक्षक बच्चों को कुछ दिन का समय देकर किसी कविता, भाषण, संवाद, नाटक या कहानी की स्क्रिप्ट देकर प्रस्तुतीकरण करने के लिए कह सकते हैं। इससे बच्चे दिए गए समय के अनुसार प्रस्तुतीकरण की तैयारी में पाठ को बार-बार पढ़कर गति, हाव-भाव और ध्वनियों के उतार-चढ़ाव का अभ्यास कर सकते हैं। शोधों की समीक्षा से यह स्पष्ट हुआ है कि बार-बार पढ़ने से शब्द पहचान, शुद्धता, स्वचालितता, समझ और पढ़ने के प्रति रवैया बेहतर होता है (डाउहॉवर, 1994; कून एवं स्टाल, 2003)। इसे कक्षागत प्रक्रिया के उदाहरण से समझते हैं :

कक्षागत प्रक्रिया का नमूना

प्राथमिक शाला की एक शिक्षिका कक्षा 5 में अँग्रेज़ी पढ़ाती हैं। इस कक्षा में 19 बच्चे हैं। इनमें से कुछ बच्चे पाठ्यपुस्तक के सरल शब्दों को पढ़ने में समय लेते हैं, और कुछ सही उच्चारण के साथ नहीं पढ़ पाते हैं। शिक्षिका ने पाठ्यपुस्तक की छोटी कहानियों के एक पाठ 'The Sky Is Falling' को चुना। यह एक छोटी कहानी है। इसमें संवादों का दोहराव है। कहानी के किसी पात्र या अलग-अलग पात्रों द्वारा ये संवाद बार-बार बोले जाते हैं। जैसे– 'The sky is falling.', 'Why are you running?', 'I am also coming with you.' आदि।

पहला चरण

शिक्षिका ने कहानी के प्रति उत्सुकता बढ़ाने और बच्चों के पूर्व ज्ञान को सक्रिय करने के उद्देश्य से उनसे आसपास के जानवरों एवं पक्षियों के बारे में बात की। उन्होंने बच्चों को अलग-अलग जानवरों एवं पक्षियों की आवाज़ निकालने के लिए कहा। जैसे– कौआ कैसे बोलता है; बिल्ली कैसे बोलती है; आदि। कुछ आवाज़ें शिक्षिका ने स्वयं भी बताईं। शिक्षिका ने पाठ्यपुस्तक के चित्रों पर चर्चा की, और बच्चों को अनुमान लगाने के लिए प्रेरित किया।

दूसरा चरण

शिक्षिका ने कहानी को हाव-भाव के साथ हिन्दी में सुनाया। हालाँकि, उन्होंने कहानी के महत्त्वपूर्ण शब्दों, अर्थात hen, tree, rabbit, fox, और महत्त्वपूर्ण संवादों को अँग्रेज़ी में ही सुनाया। ज़रूरत पड़ने पर ही उन्हें हिन्दी में बताया। कहानी को बच्चों के अनुमान लगाने के लिए एक सवाल के साथ अधूरा छोड़ा गया– Guess what happened then...? शिक्षिका ने इस सवाल पर बच्चों की प्रतिक्रिया ली। अन्त में, कहानी को दोहराते हुए प्रत्येक पात्र के संवाद को बारी-बारी से बोर्ड पर लिखा, और बच्चों से पूछा कि इसे hen ने कैसे बोला होगा। उन्होंने स्वयं बोलकर भी बच्चों को बताया।

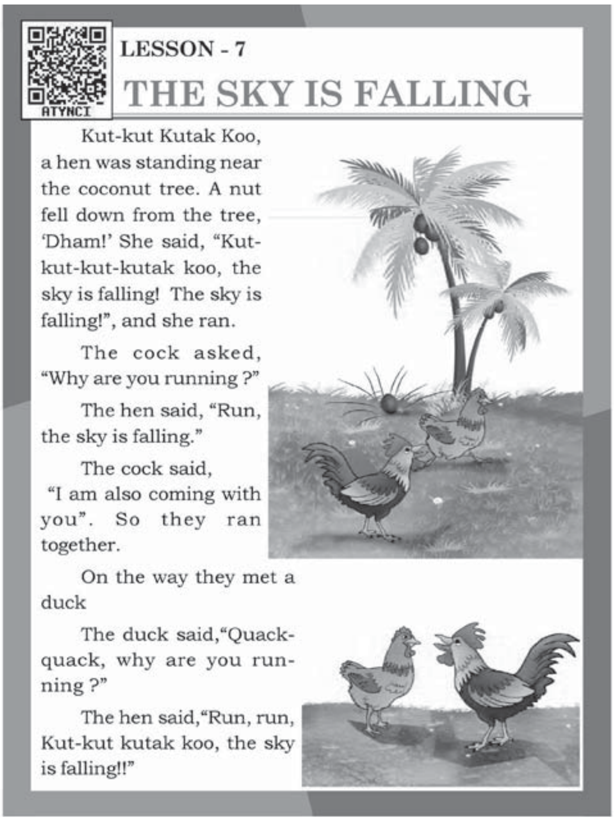
LESSON - 7

THE SKY IS FALLING

Kut-kut Kutak Koo, a hen was standing near the coconut tree. A nut fell down from the tree, 'Dham!' She said, "Kut-kut-kut-kutak koo, the sky is falling! The sky is falling!", and she ran.

The cock asked, "Why are you running ?"

The hen said, "Run, the sky is falling."

The cock said, "I am also coming with you". So they ran together.

On the way they met a duck

The duck said,"Quack-quack, why are you running ?"

The hen said,"Run, run, Kut-kut kutak koo, the sky is falling!!"

तीसरा चरण

शिक्षिका ने कहा, “इस कहानी को हम नाटक के रूप में प्रस्तुत करेंगे। अगले दिन इस कहानी को 3 समूहों द्वारा प्रस्तुत किया जाएगा।” शिक्षिका ने पाँच-पाँच बच्चों के तीन समूह बनाए, और उन्हें अलग-अलग पात्रों की भूमिका बाँट दी। बच्चों से अपने-अपने संवाद को कहानी में खोजकर उसके नीचे लाइन खींचने के लिए कहा गया। इस कार्य में शिक्षिका ने बच्चों की मदद की, और संवादों को हावभाव के साथ बोलकर भी बताया। इसके बाद उन्होंने सभी बच्चों को अपने-अपने संवाद की तैयारी करके आने के लिए कहा।

प्रस्तुतीकरण

शिक्षिका ने सभी पात्रों (hen, cock, duck, rabbit, fox) के नाम की एक-एक पट्टी तैयार की। समूह के सभी बच्चों को यह पट्टी दी गई। पहले समूह के पाँचों बच्चे अपने-अपने नाम की पट्टी लेकर लाइन से खड़े हो गए ताकि बाक़ी सभी बच्चों को यह समझ आ सके कि कौन, किस भूमिका में है। शिक्षिका ने सूत्रधार की भूमिका निभाई, और कहानी शुरू की। सभी बच्चों ने अपनी बारी पर अपने-अपने संवाद को हावभाव के साथ बोला। इसी तरह बाक़ी दो समूहों का प्रस्तुतीकरण हुआ।

पारुल बत्रा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन

यहाँ जो बच्चे पढ़ने में संघर्ष कर रहे थे, वे भी बड़ी सहजता से अपने संवादों को अँग्रेज़ी में बोल रहे थे क्योंकि हावभाव के साथ संवाद प्रस्तुत करने के लिए उन्होंने उसे बार-बार पढ़कर तैयारी की थी।

वैसे यह आवश्यक नहीं कि बच्चे बिना देखे ही अपने संवाद को बोलें। बच्चे किताब लेकर भी खड़े हो सकते हैं जिसमें उन्होंने अपने संवाद को रेखांकित कर रखा है, या वे काग़ज़ लेकर भी खड़े हो सकते हैं जिसमें सभी के संवाद लिखे हों, और उनका ख़ुद का संवाद अलग रंग में लिखा हो।

इसी तरह कविता की अलग-अलग पंक्ति या पद के साथ भी काम किया जा सकता है।

2. व्यापक पठन

व्यापक पठन का उद्देश्य बच्चों के पठन को विस्तार देना है। इसमें बच्चे किसी पाठ को एक बार पढ़ने के बाद दूसरे पाठ को पढ़ते हैं। इस तरह एक के बाद एक अलग-अलग पाठों को नियमित रूप से पढ़ते रहने से पठन कौशल बेहतर होता जाता है। ऊपर पाँचवीं कक्षा के बच्चों के साथ कहानी ‘The Sky Is Falling’ पर शिक्षिका ने विभिन्न काम किए। जैसे— बच्चों के पूर्व ज्ञान से जोड़ते हुए मौखिक बातचीत, चित्रों पर बातचीत, कोड मिक्सिंग और कोड स्विचिंग का इस्तेमाल करते हुए कहानी सुनाना, सवाल पूछना, कहानी के पात्रों के संवाद बोर्ड पर लिखकर बच्चों को हावभाव के साथ पढ़ने के लिए कहना, और अन्त में कहानी को नाटक के रूप में प्रस्तुत करवाना।

इसके बाद इस कहानी में आए पात्रों के बारे में दूसरी कहानी के ज़रिए चर्चा करना, और बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करना व्यापक पठन की दृष्टि से कारगर हो सकता है।

व्यापक पठन को प्रोत्साहित करने के लिए उस पाठ या विषयवस्तु से सम्बन्धित दूसरी सामग्री पढ़ने के लिए प्रेरित किया जा सकता है।

बच्चों को ज़्यादा-से-ज़्यादा किताब पढ़ने हेतु प्रेरित करने के लिए इस तरह बातचीत की जा सकती है :

"बच्चो! हमने एक कहानी 'The Sky Is Falling' को पढ़ा, और उसे नाटक के रूप में प्रस्तुत किया। बताइए, इस कहानी में कौन-कौन हैं? क्या आपने hen के बारे में कोई दूसरी कहानी या कविता पढ़ी है? हमारे पुस्तकालय hen के बारे में दो मज़ेदार कहानियाँ हैं। एक है– *Rosie's Walk* और दूसरी *Lalu and Peelu.* आप इन्हें ज़रूर पढ़ना फिर हम उनपर बात करेंगे।"

इसी तरह,

"क्या आपने duck के बारे में कोई दूसरी कहानी पढ़ी है? मैं *The Ugly Duckling, Super Duck* और *Farmer Duck* नाम की कुछ कहानियों की किताबों को जानती हूँ। आप इन्हें भी ज़रूर पढ़ना। अब आप rabbit, fox और lion के बारे में कहानी या कविता खोजकर पढ़ना, बाद में इन सबके बारे में हम बात करेंगे।"

व्यापक पठन को प्रोत्साहित करने के लिए मुखर वाचन

प्रायः यह देखा गया है कि शिक्षक जिन किताबों का मुखर वाचन करते हैं, बच्चों के बीच उनकी माँग बढ़ जाती है और वे उन्हें घर ले जाना चाहते हैं। इस तरह, बच्चे धीरे-धीरे बहुत-सी किताबों को पढ़ लेते हैं, और उनमें पढ़ने की आदत विकसित होती है। पढ़ने से मिलने वाला आनन्द एवं पढ़ पाने की सफलता उन्हें और ज़्यादा पढ़ने के लिए प्रेरित करती है।

व्यापक पठन को प्रोत्साहित करने के लिए स्वतंत्र पठन

शिक्षक बच्चों को पुस्तकालय कालांश में पुस्तकालय ले जाएँ, और बच्चों को अपनी-अपनी पसन्द की किताब को चुनकर पढ़ने को कहें। किताब पढ़ने के लिए उन्हें पर्याप्त समय भी दिया जाए। इस दौरान शिक्षक बच्चों के पास जाकर आवश्यकतानुसार मदद भी कर सकते हैं।

पुस्तकों से सम्बन्धित क्विज़ का आयोजन

किसी दिन शिक्षक पुस्तकालय कालांश में क्विज़ का आयोजन कर सकते हैं। वे पुस्तकालय में उपलब्ध किताबों के आधार पर कुछ सवाल तैयार कर सकते हैं, और बच्चों से पूछ सकते हैं। जैसे–

- एक कहानी है जिसमें एक मटको नाम की मोटी भेड़ दुबली होने के लिए कई उपाय करती है पर वह दुबली नहीं हो सकी। उस कहानी का नाम क्या है? *(मैं ऐसी ही हूँ)*
- कौन-सी कहानी में एक आलसी भैंस के सींग में चिड़िया घोंसला बना लेती है? *(भभो भैंस)*
- उस कहानी का नाम बताओ जिसमें मुर्ग़ी का बच्चा मिर्ची खा लेता है? *(लालू और पीलू)*

समेकन

पढ़ने के लिए ध्वनि संकेतों को पहचानना ज़रूरी है। इसलिए किसी पाठ को पढ़कर समझना, सुनकर समझने जितना सहज नहीं होता है। पढ़कर समझने के लिए धाराप्रवाह पठन के साथ-साथ उस भाषा का ज्ञान जिसमें वह पाठ लिखा गया है, शब्दों का ज्ञान, सन्दर्भ की समझ, आदि बातें भी पाठ को समझने के लिए ज़रूरी हैं। धाराप्रवाह पठन कौशल को योजनाबद्ध तरीक़े से सिखाया जाना चाहिए। पाठ योजना बनाते समय शिक्षक को मौखिक चर्चा, शब्दावली, पठन बोध व लेखन, आदि कौशलों के साथ-साथ धाराप्रवाह पठन के लिए भी कुछ अभ्यास या गतिविधियाँ शामिल करना

चित्र : मुकेश मालवीय

हो सकता है। कहानी का नाट्य रूपान्तरण और प्रस्तुतीकरण बच्चों में दूसरे भाषाई कौशलों के साथ धाराप्रवाह पठन कौशल विकसित करने की दिशा में बहुत प्रभावी होता है। इसमें पात्रों के अनुसार बच्चों को भूमिकाएँ बाँटना, कहानी से अपना-अपना संवाद खोजना या बनाना, उसे लिखना, प्रस्तुत करने की तैयारी में बार-बार पढ़ना, शिक्षक की मदद लेना,

चाहिए। प्रारम्भिक कक्षाओं में अलग-अलग सन्दर्भों, गतिविधियों एवं अभ्यासों के माध्यम से बार-बार अक्षरों व शब्दों को देखने, उनसे जूझने और उनको पहचानने का अवसर बच्चों को दिया जा सकता है। कक्षा तीसरी से पाँचवीं तक के बच्चों के साथ शिक्षक द्वारा पाठ के किसी अंश को उचित गति, शुद्धता एवं हावभाव से पढ़कर सुनाना, और बच्चों को भी सुनाने के लिए कहना हो सकता है। इसी तरह, कहानी शिक्षण के दौरान किसी पात्र के संवाद को बोर्ड पर लिखकर बच्चों को हावभाव के साथ पढ़ने के लिए कहना, किसी एक संवाद को अलग-अलग भावों (आश्चर्य, क्रोध, प्रशंसा, उपहास, आदि) के साथ पढ़ने के लिए कहना बच्चों के लिए काफ़ी असरदार साबित

आदि शामिल हैं। इसी तरह, कविता शिक्षण के दौरान शिक्षक द्वारा लय के साथ पढ़कर सुनाना, बच्चों को कविता की लय जानने में मदद करता है क्योंकि एक कविता को लयबद्ध तरीक़े से पढ़ना किसी कहानी को पढ़ने से अलग है।

अन्त में, दूसरे किसी भी कौशल की तरह धाराप्रवाह पठन कौशल विकसित करने के लिए अभ्यास की आवश्यकता होती है। यह अभ्यास यांत्रिक और उबाऊ न हो, इसके लिए शिक्षक को अलग-अलग तरह की प्रक्रियाओं, अभ्यासों और गतिविधियों को कक्षा के स्तर अनुरूप खोजना पड़ता है।

सन्दर्भ

1. Rasinski, T. V. (2012). ‘Why Reading Fluency Should Be Hot!’ *The Reading Teacher*, 65, 516-522.
2. David Kinnane. ‘The Forgotten Reading skills: fluency, and why it matters’.
3. Alan E Farstrup and S Jay Samuels (ed.). *What Research Has to Say About Reading Instruction*.
4. National Reading Panel Report

रविशेखर वर्मा दो दशक से शिक्षा के क्षेत्र में काम कर रहे हैं। आपने एक दशक शासकीय स्कूल में अध्यापन किया है। तक़रीबन 5 साल रूम-टू-रीड इंडिया ट्रस्ट में कार्यक्रम अधिकारी के रूप में कार्य किया है। फ़िलहाल अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन धमतरी में फ़ील्ड फ़ैकल्टी के तौर पर कार्यरत हैं।

सम्पर्क : ravishekhar.verma@azimpremjifoundation.org

पाठ्यपुस्तक तक ही क्यूँ सीमित न हो कोई अवधारणा

शिफ़ा ख़ान

यह लेख एक छोटा अध्ययन है। पाठ्यपुस्तकों में दिए गए चित्र पाठक की याददाश्त पर कैसे असर डालते हैं, यह जाँचने के लिए यह अध्ययन किया गया। यह अध्ययन 2 राज्यों (राजस्थान और मध्य प्रदेश) के अलग-अलग समूहों के विज्ञान शिक्षकों और बच्चों के साथ अलग-अलग समय पर किया गया। इस अध्ययन से यह समझ आया कि पाठ्यपुस्तकों में दी गई विषयवस्तु का हमारी याददाश्त पर बहुत गहरा असर होता है। -सं.

सन्दर्भ

एक टीचर एजुकेटर के तौर पर काम करते हुए कई बार शिक्षकों से बातचीत होती है कि बच्चों में किसी भी अवधारणा को विकसित करने के लिए पाठ्यपुस्तक के इतर भी उदाहरण देने चाहिए, और अवधारणा को बच्चों के रोज़मर्रा के जीवन से जोड़कर पढ़ाना चाहिए। इस बात का ज़िक्र कई लेखों में भी मिलता है। इन कथनों को जाँचने के लिए मैंने वाष्पीकरण का उदाहरण लेते हुए बच्चों और विज्ञान शिक्षकों के साथ कुछ काम किया। इसका ज़िक्र इस लेख में किया गया है।

योजना

रोज़मर्रा के जीवन्त उदाहरण के बनिस्बत पाठ्यपुस्तक में दिए गए चित्र और विषयवस्तु का हमारी याददाश्त पर असर जाँचने के लिए मैंने वाष्पीकरण से सम्बन्धित 5 चित्र तैयार करे। अलग-अलग विज्ञान कार्यशालाओं के दौरान कुल 150 शिक्षकों को ये पाँच चित्र पढ़ने को दिए गए। प्रत्येक चित्र का विवरण नीचे दिया गया है।

- चित्र 1 : इस चित्र में आसमान में काले बादल थे, और खुले में तार पर पड़े गीले कपड़ों को दर्शाया गया था। इस चित्र में दिन या रात को दर्शाने के लिए सूरज या चाँद नहीं बनाया गया था।
- चित्र 2 : दूसरा चित्र जलचक्र का था। ज़्यादातर पाठ्यपुस्तकों में वाष्पीकरण चित्र के माध्यम से दर्शाया जाता है।
- चित्र 3 : तीसरे चित्र में एक घर और उसके अन्दर एक मटके में रखे जल को दर्शाया गया था। इसके साथ ही घर के बाहर पेड़ और सूरज भी बनाया गया था।
- चित्र 4 : चौथा चित्र, दूसरे चित्र से कुछ मिलता जुलता ही था। इसमें दिन का समय दिखाने के लिए सूरज और बादल बनाए गए थे। साथ ही खुले में तार पर लटके हुए गीले कपड़ों को भी दर्शाया गया था।
- चित्र 5 : इस चित्र में घर, पेड़, काले बादल और खुले में रखे हुए पानी से भरे टब को दर्शाया गया था। यहाँ पर भी दिन और रात को दिखाने के लिए सूरज या चाँद नहीं बनाया गया था।

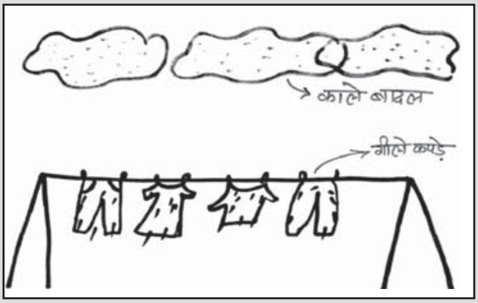

चित्र 1

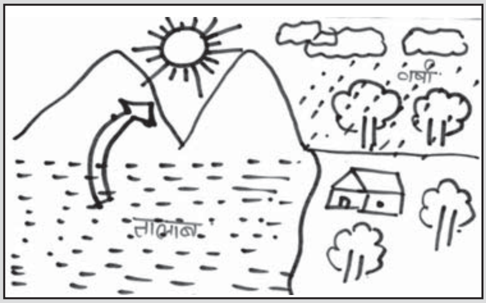

चित्र 2

चित्र 3

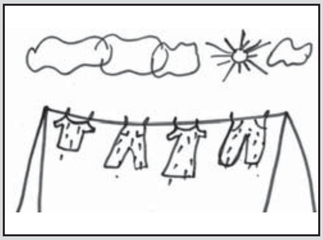

चित्र 4

चित्र 5

कहाँ हो रहा है वाष्पीकरण ?

उपर्युक्त पाँचों चित्र विज्ञान शिक्षकों के अलग-अलग समूहों को दिए गए। शिक्षकों से कहा गया कि इन पाँचों चित्रों में से जिस चित्र में उन्हें वाष्पीकरण होता दिख रहा है, उस चित्र पर उन्हें सही का निशान लगाना है। शिक्षकों से आई प्रतिक्रिया के विश्लेषण पर निम्न बिन्दु सामने आए :

चित्र क्रमांक	प्रतिक्रिया
चित्र 1	80-85 फ़ीसदी शिक्षकों ने इस चित्र को वाष्पीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत नहीं चुना। चर्चा करने पर यह बात सामने आई कि इस चित्र में काले बादल हैं और सूरज नहीं है। इसलिए ज़्यादातर शिक्षकों ने इसे वाष्पीकरण के उदाहरण में नहीं रखा।
चित्र 2	98-100 फ़ीसदी शिक्षकों ने इस चित्र को वाष्पीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत चुना। चर्चा करने पर यह बात भी आई कि जलचक्र का ये चित्र पाठ्यपुस्तकों में दिया गया होता है। इस चित्र में विभिन्न स्रोतों से जल, जब बादलों में जा रहा होता है उसी प्रक्रिया को वाष्पीकरण के रूप में दर्शाया जाता है।
चित्र 3	इस चित्र को 30 फ़ीसदी शिक्षकों ने चुना। इसका कारण था कि इस चित्र में सूरज है। दूसरा, शिक्षकों का अनुभव रहा है कि मटके में छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इसके कारण पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है, और उसके अन्दर का पानी ठण्डा हो जाता है। जिन शिक्षकों ने इसे वाष्पीकरण के अन्तर्गत नहीं रखा, उनका मानना था कि सूरज की किरणें सीधी मटके पर नहीं पड़ रही हैं, इसलिए वाष्पीकरण नहीं होगा।

चित्र 4	इस चित्र को 80 फ़ीसदी शिक्षकों ने चुना। चित्र पर आई प्रतिक्रिया थी कि इस चित्र में सूरज और गीले कपड़े हैं। जब हम बाहर सूखने के लिए कपड़े डालते हैं तो वाष्पीकरण के कारण कपड़े सूख जाते हैं। इस वजह से शिक्षकों ने इसे वाष्पीकरण के उदाहरण में रखा।
चित्र 5	25-30 फ़ीसदी शिक्षकों ने इस चित्र को वाष्पीकरण के अन्तर्गत चुना। चर्चा करने पर उन्होंने कहा कि चूँकि चित्र में चाँद या सूरज नहीं बना हुआ है, इसलिए यह समझ नहीं आता कि ये दिन का दृश्य है या रात का। इसके साथ ही काले बादल होने के कारण वाष्पीकरण नहीं होगा। जिन शिक्षकों ने इसे वाष्पीकरण के अन्तर्गत रखा था, उनका कहना था कि टब में जो पानी है उसका वाष्पीकरण तो होगा, लेकिन उसकी दर बहुत कम होगी क्योंकि काले बादल हैं।

चर्चा से उभरे बिन्दु

हर कार्यशाला में इन पाँचों चित्रों पर शिक्षकों की प्रतिक्रिया ली गई। प्रतिक्रिया लेने के बाद शिक्षकों की इस प्रतिक्रिया को बड़े समूह में साझा किया गया, और एक-एक चित्र पर विस्तार से चर्चा की गई। इन चित्रों पर चर्चा के दौरान निम्न बिन्दु निकलकर आए :

- जलचक्र वाले चित्र में ज़्यादातर शिक्षकों ने माना कि उसमें वाष्पीकरण हो रहा है क्योंकि यही चित्र पाठ्यपुस्तकों में वाष्पीकरण को दर्शाने के लिए दिया जाता है।

- वाष्पीकरण की प्रक्रिया को ज़्यादातर लोग सूरज की उपस्थिति से भी जोड़कर देखते हैं। जिन चित्रों में सूरज बना हुआ है उन चित्रों को वाष्पीकरण प्रक्रिया के लिए ज़्यादा चुना गया, बनिस्बत उन चित्रों के जिनमें सूरज नहीं बना है, या काले बादल बने हुए हैं।

- जब सभी चित्रों पर चर्चा पूरी हो जाती है तब शिक्षकों को ये बात अच्छे से समझ आती है कि चाहे दिन हो या रात, सूरज हो या न हो, काले बादल हों या साफ़ आसमान, या चाहे बारिश भी क्यों न हो रही हो, वाष्पीकरण की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। हाँ, यह ज़रूर है कि अलग-अलग मौसम और परिस्थितियों में इसकी दर कम-ज़्यादा हो सकती है। इस पूरी प्रक्रिया के दौरान शिक्षकों को बस उन चित्रों को चुनना था जिनमें वाष्पीकरण हो रहा है, भले ही वो कम दर से ही क्यों न हो रहा हो। इस हिसाब से देखेंगे तो हम पाएँगे कि सभी चित्रों में वाष्पीकरण हो रहा है।

- शिक्षकों ने यह बात मानी कि चूँकि पाठ्यपुस्तकों में वाष्पीकरण को दर्शाने के लिए जलचक्र का चित्र दिया हुआ होता है, इसलिए वाष्पीकरण सुनते ही वे उस चित्र से ज़्यादा जुड़ाव महसूस करते हैं। वाष्पीकरण की प्रक्रिया दर्शाने वाले जलचक्र में सूरज ज़रूर बना हुआ होता है। अत: वाष्पीकरण होने के लिए सूरज का भी चित्र में होना अनिवार्य-

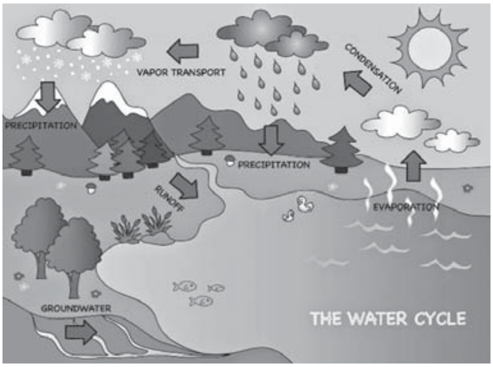

चित्र 6

सा लगने लगता है, जबकि हम अपने रोज़मर्रा के कामों में वाष्पीकरण को बख़ूबी महसूस कर रहे होते हैं।

- यह बात सभी को अच्छे से समझ में आई कि पाठ्यपुस्तकों का किसी भी अवधारणा को बनाने में बहुत बड़ा योगदान होता है। इसके साथ-साथ यह भी चर्चा हुई कि किसी भी अवधारणा से जुड़े हुए सारे अनुभव हम पाठ्यपुस्तक में नहीं दे सकते क्योंकि हर किताब की अपनी एक सीमा होती है। लेकिन एक शिक्षक होने के नाते हमारी ये ज़िम्मेदारी होती है कि हम किसी भी अवधारणा से जुड़े ज़्यादा-से-ज़्यादा अनुभव अपनी कक्षा में दें, ताकि उस अवधारणा से सम्बन्धित अधिक-से-अधिक अनुभव हमारे बच्चों के पास हों। ऐसा करने से हम समग्रता में किसी भी अवधारणा को देख पाएँगे न कि केवल पाठ्यपुस्तक की नज़र तक।

बच्चों के साथ कार्य के अनुभव

विज्ञान शिक्षकों के समूह के साथ इन चित्रों और वाष्पीकरण की अवधारणा से सम्बन्धित भ्रान्तियों की जाँच परख करने के बाद यही प्रक्रिया कक्षा 9 और 10 में पढ़ने वाले 100 बच्चों के साथ की गई। इनमें मध्य प्रदेश और राजस्थान के तीन स्कूलों के 100 बच्चों को यही पाँच चित्र देकर कहा गया कि वो इन चित्रों में से उन चित्रों को चुनें जिनमें वाष्पीकरण हो रहा है, और उसका कारण भी लिखें।

बच्चों की प्रतिक्रिया इस प्रकार रही :

चित्र क्रमांक	प्रतिक्रिया
चित्र 1	10 फ़ीसदी बच्चों ने ही इस चित्र को वाष्पीकरण के अन्तर्गत चुना। ज़्यादातर बच्चों का मानना था कि वाष्पीकरण के लिए सूरज की उपस्थिति और उसकी किरणों का होना ज़रूरी है। चूँकि इस चित्र में काले बादल हैं तो सूरज की किरणें कपड़ों तक नहीं पहुँच पाएँगी, और वाष्पीकरण नहीं होगा।
चित्र 2	99-100 फ़ीसदी बच्चों ने इस चित्र को वाष्पीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत चुना। उन्होंने लिखा कि सूरज की किरणें तालाब के पानी पर पड़ेंगी जिससे वो गरम होकर वाष्प में बदल जाएगा, और बादल बन जाएँगे।
चित्र 3	इस चित्र को 35-40 फ़ीसदी बच्चों ने चुना। चर्चा के दौरान इसमें कुछ बिन्दु निकलकर आए। मसलन, इसमें सूरज है तो वाष्पीकरण हो रहा होगा। पेड़ों की पत्तियों से भी जल, वाष्प के रूप में जाता है जिसे वाष्पोत्सर्जन कहते हैं। इसलिए यहाँ वाष्पीकरण हो रहा है। पानी के मटके की सामग्री, और मटके के खुले या बन्द होने से भी वाष्पीकरण प्रभावित होगा।
चित्र 4	इस चित्र को 70-75 फ़ीसदी बच्चों ने चुना। चित्र पर चर्चा के दौरान वही बात सामने आई कि इस चित्र में सूरज है और गीले कपड़े भी। जब हम बाहर सूखने के लिए कपड़े डालते हैं तो वाष्पीकरण के कारण कपड़े सूख जाते हैं।
चित्र 5	5 फ़ीसदी बच्चों ने इस चित्र को वाष्पीकरण के अन्तर्गत चुना। बच्चों ने लिखा कि काले बादल होने के कारण वाष्पीकरण नहीं होगा। इस चित्र को वाष्पीकरण की प्रक्रिया के अन्तर्गत रखने वाले बच्चों का कहना था कि टब में रखे पानी का वाष्पीकरण होगा, लेकिन उसकी दर बहुत कम होगी क्योंकि काले बादल हैं।

बच्चों की प्रतिक्रियाओं से निकलकर आए कुछ और बिन्दु

- बच्चों ने वाष्पीकरण होने के लिए सूरज की उपस्थिति को बेहद अहम और ज़रूरी माना है।
- 100 में से बस एक ही बच्ची ऐसी मिली जिसने पाँचों चित्रों को वाष्पीकरण के अन्तर्गत चुना। उसने लिखा कि सूरज की उपस्थिति नहीं होने पर वाष्पीकरण की दर कम ज़रूर होगी, लेकिन वाष्पीकरण सभी में होगा। हालाँकि 150 विज्ञान शिक्षकों के किसी भी समूह में ऐसी एक भी प्रतिक्रिया नहीं मिली।
- बच्चों की कुछ प्रतिक्रियाओं में ये ज़िक्र भी आया कि सतही क्षेत्र का बड़ा और गीला होना भी वाष्पीकरण के लिए ज़रूरी है। इसके साथ ही हवा की तेज़ गति और तापमान का असर भी वाष्पीकरण पर होता है।
- वाष्पीकरण के लिए पानी खुले में होना ज़रूरी है। जैसे– तालाब, गीले कपड़े, आदि। बहुत-से बच्चों ने ये भी लिखा कि जब सूरज की किरणें सीधी पड़ेंगी तब ही वाष्पीकरण होगा। काले बादल होने के कारण सूरज की किरणें गीले कपड़ों पर नहीं पड़ रही हैं, इसलिए वाष्पीकरण नहीं हो रहा है।
- जिस चित्र में मटका रखा हुआ है, उसमें भी बहुत-से बच्चों ने यही तर्क दिया कि अन्दर रखे होने के कारण सूरज की किरणें उसपर नहीं पड़ेंगी। इसलिए उसमें रखे पानी का वाष्पीकरण नहीं हो पाएगा।

समेकन

यह शोध दर्शाता है कि पाठ्यपुस्तक में दिए गए चित्र अवधारणा निर्माण में अहम होते हैं। अगर पाठ्यपुस्तकों को ठीक से डिज़ाइन नहीं किया जाता है और चित्र की विषयवस्तु की बारीक़ियों के बारे में सोचा नहीं जाता है तो बहुत बड़ी संख्या में शिक्षक और बच्चे अलग-अलग तरह की भ्रान्तियाँ बना लेते हैं। यह भ्रान्तियाँ आगे की अवधारणा समझने में बाधा बनती हैं। कक्षा में किसी भी अवधारणा पर काम करते हुए शिक्षक को चाहिए कि वो पाठ्यपुस्तक के इतर भी विषयवस्तु, उदाहरण, आदि के साथ उस अवधारणा से जुड़े उनके रोज़मर्रा के अनुभवों को कक्षा में शामिल करें।

शिफ़ा, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन में साल 2014 से कार्यरत हैं। शुरुआती आठ साल उन्होंने राजस्थान के टोंक और राजसमंद ज़िलों में काम किया। पिछले दो वर्षों से वे मध्य प्रदेश के सागर ज़िले में काम कर रही हैं। उन्हें बच्चों के साथ भाषा और विज्ञान विषय में काम करने में विशेष रुचि है। हिस्ट्री ऑफ़ साइंस से जुड़ी किताबें और लेख पढ़ना उन्हें अच्छा लगता है।

सम्पर्क : shifa.khan@azimpremjifoundation.org

ज़मीनी अफ़सानों का संकलन...
एक शहर, एक पहाड़, एक मोहल्ला

नीतू यादव

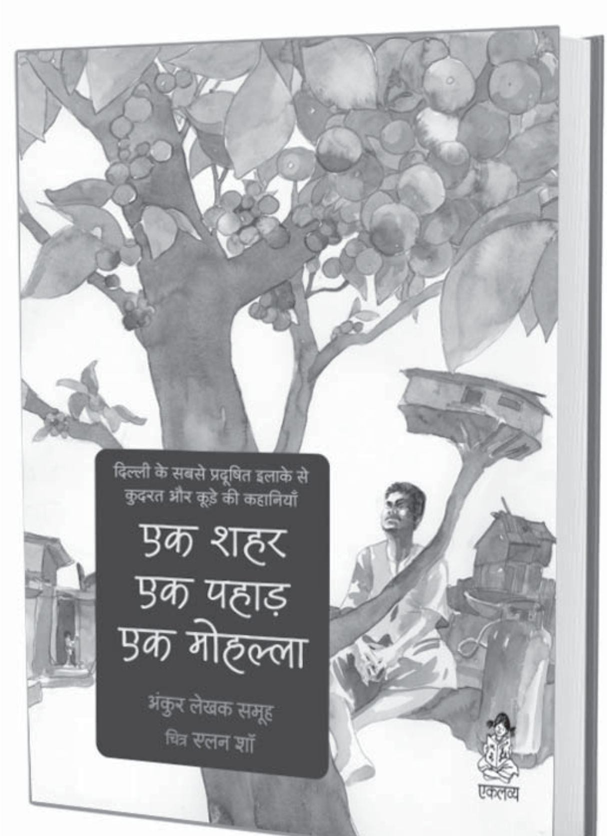

एक शहर
एक पहाड़
एक मोहल्ला

लेखक : अंकुर लेखक समूह
प्रकाशक : एकलव्य प्रकाशन

हाल ही में पढ़ी किताब *एक शहर, एक पहाड़, एक मोहल्ला* ने मुझे काफ़ी प्रभावित किया। इस किताब में लोगों के जीवन से जुड़े जीवन्त अनुभवों के माध्यम से दिल्ली के एक इलाक़े खिचड़ीपुर और उसके आसपास की जगहों को समझने पर ज़ोर दिया गया है। यह किताब पाँच खण्डों में लिखी गई है। और ये पाँचों खण्ड आम जन-जीवन और पर्यावरण पर प्रदूषण व उसके प्रभाव से जुड़े अलग-अलग महत्त्वपूर्ण और मूलभूत मुद्दों पर प्रकाश डालते हैं। जब मैंने यह किताब पढ़ी, मुझे लगा जैसे मैं एक अलग ही दिल्ली में जा पहुँची हूँ। वो दिल्ली जो कभी चर्चाओं में नहीं रही, वो जिसे कम ही लोग जानते होंगे, और वो दिल्ली जो शायद अब तक किताबों का हिस्सा नहीं बनी थी। यह किताब एक महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ है जो बड़ी सादगी के साथ कुछ गहरे सवाल उठाती है।

यह किताब बेहद संवेदनशीलता के साथ हमें उन आम लोगों के जीवन की झलक दिखलाती है जो प्राकृतिक के साथ ही कृत्रिम बाधाओं के साए में ख़ुद को ज़िन्दा रखने की जद्दोजहद में लगे हैं। यह किताब दिल्ली के खिचड़ीपुर इलाक़े पर केन्द्रित है। यह दिल्ली का सबसे प्रदूषित इलाक़ा है, और दिल्ली के सबसे बड़े लैंडफ़िल के आसपास बसा हुआ है। लैंडफ़िल मतलब कूड़े-कचरे का विशाल पहाड़। इसके इर्द गिर्द लोगों का

जीवन चल रहा है, और वो कूड़ा पहाड़ काफ़ी विशाल है। यह कूड़ा पहाड़ लोगों के जीवन में कुछ इस हद तक समा चुका है कि जब वे किसी विशाल चीज़ की तुलना भी करते हैं तो ये कूड़ा पहाड़ उनके लिए एक पैमाना बन जाता है। यह बात किताब के पहले खण्ड के पहले अध्याय की शुरुआती लाइनों में दर्ज अनुभवों से समझ आती है :

"क्या तुमने क़ुतुब मीनार देखी है?"

"हाँ, लेकिन सिर्फ़ किताब में ही देखी है, पास से नहीं देखी।"

"पता है क़ुतुब मीनार बहुत ऊँची होती है, बहुत बड़ी भी।"

"कितनी ऊँची? लैंडफ़िल से भी बड़ी क्या?"

"तुम सबकी सारी बातचीत लैंडफ़िल के आसपास आकर क्यों रुक जाती है?"

"क्योंकि हम सबने पास से लैंडफ़िल को ही देखा है और यही हमारी दुनिया भी है।"

इससे हम कूड़ा पहाड़ की विशालता का अन्दाज़ा लगा ही सकते हैं। इसके साथ ही मन में एक सवाल भी उभर आता है कि जब हम किसी ऐसी जगह से गुज़रते हैं जहाँ कचरा डंप किया जाता है हम एक पल भी बिना अपनी नाक पर हाथ रखे वहाँ खड़े नहीं रह सकते। फिर भला ये लोग, जो इतने बड़े कूड़े के पहाड़ के आसपास रहते हैं, वहाँ कैसे रह पाते होंगे! इस किताब को पढ़कर काफ़ी हद तक वहाँ रहने वाले लोगों की असल परिस्थिति से वाक़िफ़ हुआ जा सकता है।

8 साल से अधिक उम्र के पाठकों के लिए तैयार की गई कथेतर श्रेणी की यह किताब 135 पन्नों की है। इसे पठनीय और आकर्षक बनाने के लिए कुछ बातों का ख़ासा ध्यान रखा गया है। जैसे– इस किताब का आवरण पृष्ठ जो देखने में आकर्षक होने के साथ-साथ किताब की विषयवस्तु की झलक भी बख़ूबी दे रहा है।

किताब की विषयवस्तु बेहद संजीदा है। यह एक शहर, एक पहाड़, एक मोहल्ले और वहाँ फैले प्रदूषण के आम लोगों के जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को तो बयाँ करती ही है, साथ ही पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति संवेदनशीलता भी बनाती है, और इसमें समाधान की तलाश भी है। यह किताब दिल्ली के प्रदूषित इलाक़ों की समस्याओं को समझने और उनके समाधान की दिशा में एक क़दम हो सकती है।

इस किताब की भाषा भी आपको अपनी ओर खींच लेती है। इसके शुरुआती पन्नों के कुछ अंश यहाँ पढ़े जा सकते हैं :

"पहाड़ों पर शहर तो उगते आए हैं, पर शहरों में पहाड़ उगते हुए देखना सबसे हैरतअंगेज़ परिघटना है।''

"जब भी हम एक सुन्दर प्रकृति की कल्पना करते हैं तो उसे इंसान विहीन कर देते हैं। हमारी उस कल्पना में आसमान नीला हो जाता है, पानी साफ़, पेड़ हरे-भरे, चिड़ियाँ चहचहाती हुईं... पर हमारे हिस्से की दिल्ली में इंसान, पेड़, जीव-जन्तु, गन्ध, हवा-पानी, शोर, सबकुछ साथ और सजीव हैं। इस 'प्रकृति' से हम कैसे जुड़ाव बनाते हैं और कैसे इसमें जीते हैं, यही हमारी संस्कृति है।''

किताब की भाषा आपको अचरज से भर देती है, और अगले पन्नों को पलटने के लिए एक ट्रिगर का काम करती है। इस तरह का कहन एक तरह के विश्लेषण में भी ले जाता है, और हमें हमारे अन्दर झाँकने को मजबूर करता है। हम जब अपने आसपास नज़र दौड़ाते हैं या ख़ुद को टटोलते हैं, हम पाते हैं कि वास्तव में हम ऐसा ही तो करते हैं। जब हम प्रकृति की बात करते हैं, हमारा ध्यान पेड़-पौधों, नदी-तालाबों के इतर जाता ही नहीं।

इस किताब के चित्र एलन शॉ द्वारा बनाए गए हैं। चित्रों में वाटर कलर के इस्तेमाल और रंग संयोजन से पात्रों के भावों को इस तरह उभारा गया है कि वे हमें हूबहू महसूस होने लगते हैं। वास्तविकता को पुख़्ता करने के लिए मूल तस्वीरों का उपयोग, खिचड़ीपुर को दिल्ली में चिह्नित करता एक नक़्शा, खिचड़ीपुर की लाइन ड्रॉइंग और किताब में कबाड़ की विविधता को बताता कबाड़-कोष। यह एक इशारा है कि शहर कितनी बड़ी तादाद में कबाड़ के सृजक बन रहे हैं।

एक और बात जो इस किताब को ख़ास बनाती है, वो हैं इसके रचनाकार। ये दिल्ली शहर के खिचड़ीपुर इलाक़े में रहने वाली किशोरियाँ हैं। उनके वास्तविक अनुभवों और उनके आसपास रहने वाले लोगों के जीवन से जुड़ी वास्तविक घटनाओं पर आधारित यह संकलन अपने-आप में अनूठा है।

यह सभी लेखक अंकुर सोसाइटी फ़ॉर ऑल्टर्नेटिव्ज़ इन एजुकेशन में लेखन अभ्यास करते हैं। यह किताब इन उभरते लेखकों को मंच देने का एक प्रयास है।

किताबों में अकसर पहाड़ों पर शहरों के बसने के क़िस्से होते हैं, पर यह किताब इसलिए ख़ास है क्योंकि यह हमें दिल्ली जैसे शहर में पहाड़ उगने का एक ख़ास क़िस्सा सुनाती है, और कोई ऐसा-वैसा

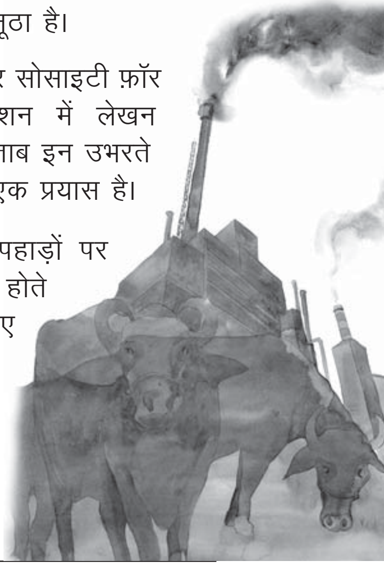

पहाड़ नहीं, कूड़े-कचरे का पहाड़। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह किताब हमें दिल्ली शहर की चकाचौंध के विपरीत कूड़ा पहाड़ के इर्द गिर्द बसे मोहल्लों में ले जाती है, और वहाँ के स्थानीय लोगों के रोज़ के अनुभवों, शहर की आबोहवा बदलने के स्थानीय क़िस्सों को नज़दीक से महसूस करने के मौक़े देती है।

बच्चों की ज़्यादातर किताबों में जब दिल्ली की बात होती है, दिल्ली राजनीतिक व ऐतिहासिक घटनाओं तक ही सिमटकर रह जाती है। शिक्षा तंत्र में कोई भी पाठ्यक्रम स्थानीय इतिहास, संस्कृति, समस्याओं और सम्बन्धों को चर्चा के लायक़ नहीं समझता। आमतौर पर पाठ्यक्रम में बच्चों को स्थानीय मुद्दों से दूर ही रखा जाता है। लेकिन बच्चों को यह पता होना चाहिए कि शहरों और मोहल्लों में रोज़मर्रा की ज़िन्दगी जीते हुए जो देखा, सुना और जाना है, वह भी ज्ञान के दायरे में आता है। इसलिए इस किताब का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। इसमें सँजोए गए अनुभवों से गुज़रकर

बच्चे एक ख़ास परिस्थिति से रूबरू हो सकेंगे, और बच्चे ही क्यों, मुझे लगता है हर किसी को यह किताब ज़रूर पढ़नी चाहिए।

नीतू यादव, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के कामों में लम्बे समय से जुड़ी हुई हैं। अपने अनुभवों को लेखन के माध्यम से साझा करना, और बच्चों के लिए कहानियाँ लिखने में ख़ास दिलचस्पी है। वर्तमान में, एकलव्य फ़ाउण्डेशन की शिक्षा साहित्य टीम और 'लाइब्रेरी से दोस्ती' कोर्स का हिस्सा हैं।

सम्पर्क : neetu.yadav23@yahoo.in

चुनौतियों से पार पाने के लिए संवाद और विश्वास बहुत महत्त्वपूर्ण हैं

शिक्षिका अर्चना अरोड़ा से दीपक राय की बातचीत

दीपक : अर्चनाजी, अपनी शिक्षा और शिक्षक बनने की यात्रा के बारे में कुछ बताएँ?

अर्चना : मैं महात्मा गाँधी राजकीय विद्यालय ग्वार ब्रह्मणान में अध्यापिका हूँ। मेरा जन्म और पूरी शिक्षा जयपुर ज़िले में हुई है। मैं एक औसत छात्रा रही। आम बच्चों की तरह स्कूल जाना, और बँधी हुई ज़िन्दगी का हिस्सा बनना मुझे पसन्द नहीं था। आर्ट, यानी कला के कार्यों मेरी बहुत रुचि थी। चित्र बनाना, नृत्य करना, गीत गाना और कहानी पढ़ना मुझे अच्छा लगता था। इसके अलावा, मुझे डायरी लिखना भी पसन्द था। यह मेरे जीवन की विडम्बना ही रही कि जब कक्षा 9 में ऐच्छिक विषय चुनने की बारी आई तो मेरे चुने हुए विषयों, हिन्दी साहित्य, चित्रकला और होम साइंस, को मेरे माता-पिता ने मेरी अनुमति और इच्छा के विरुद्ध कॉमर्स विषय से यह समझते हुए बदलवा दिया कि औसत छात्रा होने के कारण मैं अपने चुने विषयों का अध्ययन स्वयं नहीं कर पाऊँगी। और कॉमर्स में मेरी बड़ी बहन और पिता के सहयोग से पढ़कर मेरी नैया पार लग जाएगी। यहाँ एक बात बताना ज़रूरी है कि मैंने अपने शैक्षणिक प्रदर्शन में हमेशा गणित विषय में ही मात खाई थी। यह एक तरह से गणित विषय से मेरी बेरुख़ी थी। गणित में ग्रेस मार्क्स से पास होने वाली मेरी जैसी छात्रा के लिए कॉमर्स विषय कैसे उचित था, यह मैं कभी समझ नहीं पाई। हाँ, यह ज़रूर समझ आया कि यह मेरे शैक्षणिक जीवन में एक हादसा था, और ऐसे हादसे बहुतों के साथ हुए होंगे, और अभी भी हो ही रहे हैं।

दीपक : आप शिक्षक ही क्यों बनीं? यह कैरियर के तौर पर आपका चुनाव था या रोज़गार की मजबूरी?

अर्चना : मेरी माँ एक अध्यापिका रही हैं। हिन्दी साहित्य में उनकी गहरी रुचि रही, और वही उनका अध्यापन का विषय भी रहा है। अतः शिक्षक बनने का विचार और सपना मेरे बचपन का ख़ास खेल रहा। स्कूल में प्रवेश से पहले ही मैंने अपनी माताजी के सहयोग से धाराप्रवाह हिन्दी पढ़ना सीख लिया था। इसी के चलते विद्यालय में शिक्षिका प्रायः मुझे ही मेरी कक्षा में अपने सहपाठियों को वर्णमाला सिखाने, और बाद में शब्द व पुस्तक पढ़ना सिखाने का काम सौंप दिया करती थीं।

शिक्षक बनने का एक कारण यह भी था कि कुछ विषयों में पढ़ाई में कमज़ोर होने के कारण जो मुश्किलें मैंने अनुभव कीं, मेरे मन में कहीं था कि यदि मैं शिक्षक होती तो अपने विद्यार्थियों के साथ वैसा व्यवहार न करती। मुझे होमवर्क करना पसन्द नहीं था। मैं समझती थी कि शिक्षक बनूँगी तो बच्चों को ऐसा होमवर्क दूँगी जिसे करने में उन्हें आनन्द आए, और वह उन्हें बोझ न लगे। जो बच्चे कमज़ोर हैं, उनको अतिरिक्त समय व ध्यान देकर, उनका अपमान किए बिना मैं उन्हें स्कूल में बने रहने के लिए पढ़ना-लिखना सिखाऊँगी। रोज़गार तो एक मुद्दा है ही, लेकिन शिक्षक बनने के लिए मेरे पास ये बहुत-से कारण और प्रेरणाएँ थीं।

दीपक : अपनी कक्षा के बारे में कुछ बताएँ। कैसी होती हैं कक्षा और कक्षा गतिविधियाँ? आप पाठ्यपुस्तक से इतर भी बाल साहित्य से जुड़ी चीज़ों का इस्तेमाल करती हैं क्या?

अर्चना : मेरी कक्षा का वातावरण आधे घण्टे में कई बार बदलता है। ऐसा इसलिए, क्योंकि अभिवादन के बाद से ही शुरू होती हैं उनकी वे शिकायतें व इच्छाएँ, जो बच्चे मुझसे सुलझवाना चाहते हैं या मेरे साथ बाँटना चाहते हैं।

5-7 मिनट बाद मैं अपनी शिक्षक की भूमिका में आ जाती हूँ, और विषय के अध्यापन, होमवर्क की जाँच, जैसे कार्यों में लग जाती हूँ। बच्चों का आकलन करती हूँ और उसी के अनुरूप शिक्षण करती हूँ। इसी के साथ, आवश्यकता वाले बच्चों को निदानात्मक व उपचारात्मक शिक्षण करवाती हूँ।

पुस्तकालय प्रभारी होने के कारण, मैं अपने विषय हिन्दी को रोचक बनाने के लिए पुस्तकालय की पुस्तकों का सहारा लेती हूँ। जो बच्चे किताब पढ़ना नहीं जानते, उन्हें कहानी पढ़कर सुनाती हूँ, और चित्र पठन का सहारा लेती हूँ। जो बच्चे पढ़ सकते हैं, वे अपनी इच्छानुसार पुस्तक लेकर पढ़ते हैं। कई बार कक्षा में किसी छोटी कहानी को नाटक के रूप में भी बच्चे अभिनीत करते हैं। कविताओं-कहानियों को गाकर, हावभाव के साथ बोलना, शब्द अन्त्याक्षरी करना, एबीएल किट से खोजना और पढ़ना, इत्यादि पाठ्यपुस्तक से इतर गतिविधियाँ रहती हैं। मेरा अनुभव है कि बाल साहित्य के साथ क्रियाकलाप से बच्चों की बच्चों का सीखना बेहतर हुआ है, और सामान्यतया पढ़ने-लिखने में उनकी रुचि बढ़ी है।

दीपक : अपनी कक्षा की शिक्षण प्रक्रियाओं में बच्चों की सहभागिता आप कैसे सुनिश्चित करती हैं?

अर्चना : शिक्षण में बच्चों की सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए मुझे अलग से कोई योजना नहीं बनानी पड़ती, बच्चों के साथ मेरा सम्बन्ध शिक्षक-शिक्षार्थी का है। मैं कभी उन्हें निर्देश भी देती हूँ और मिलकर भी काम करती हूँ। विद्यालय पहुँचने के बाद बच्चे प्रार्थना स्थल पर एकत्रित होते हैं, और प्रार्थना सभा के बाद उनसे प्रतिदिन कुछ संवाद किया जाता है। यह संवाद उनके शैक्षिक प्रदर्शन के साथ ही उनके स्वास्थ्य, अनुशासन, विद्यालय की व्यवस्थाओं में उनके सहयोग को लेकर भी किया जाता है। यहीं से बच्चों को प्रोत्साहन देना, निर्देशित करना, जैसे कार्यों के साथ उनसे जुड़ाव शुरू हो जाता है। विद्यार्थियों की सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए हमारे बीच का यही अनौपचारिक सम्बन्ध मेरे लिए सहायक सिद्ध होता है। कक्षा में विद्यार्थियों को उनके स्तरानुसार कार्य देना, उन्हें शिक्षण कार्य से जोड़ता है। सम्पूर्ण कक्षा को एक साथ कराई जाने वाली गतिविधियों में कठिन, मध्यम और सरल, सभी प्रकार के प्रश्नों व उदाहरणों द्वारा विषयवस्तु को स्पष्ट करना,

सभी बच्चों को यह अहसास करवाता है कि वह भी कक्षा गतिविधियों का सक्रिय हिस्सा हैं। इन गतिविधियों में अन्त्याक्षरी करवाना, टीम बनाकर प्रतिस्पर्धी रूप से प्रश्नोत्तर करना, आदि कार्य होते हैं। इनमें सभी विद्यार्थी एकजुटता से अपनी टीम के कमज़ोर सदस्य को भी जीतने की भावना से सहयोग करते हैं। जो बच्चे विषयवस्तु को जल्दी समझ लेते हैं, मैं उनको स्वतंत्र रूप से ऐसे कार्य करने को देती हूँ जिनमें वह स्वयं चिन्तन करके निष्कर्ष निकालें, और कार्य करें। मध्यम समझ वाले विद्यार्थियों को अपने साथ लेकर मैं उनकी समझ को सुदृढ़ करने के कार्य भी देती हूँ। यह कार्ययोजना अच्छी और मध्यम समझ वाले बालकों को शिक्षण गतिविधियों में संलग्न रखती है, और कमज़ोर शैक्षिक स्तर वाले बालकों को अलग से कार्य करवाने के लिए मुझे समय भी मिल जाता है।

दीपक : क्या चुनौतियाँ आईं बच्चों की लर्निंग को बेहतर करने में; और आपने क्या कुछ किया उन चुनौतियों से पार पाने में?

अर्चना : ढेर सारी चुनौतियाँ आती हैं। कई बार वे व्यवस्थागत भी होती हैं। लेकिन एक गम्भीर चुनौती है, अभिभावकों को विद्यार्थियों की शिक्षा के प्रति जागरूक करना।

हमारे विद्यालय में प्राय: वे बच्चे आते हैं जिनके माता-पिता बच्चों की शिक्षा पर विद्यालय भेजने के अलावा कोई और व्यय नहीं करना चाहते या कर नहीं पाते। अर्थात, बच्चों ने विद्यालय में क्या सीखा, उनको समय देना, उनको नियमित और समय पर विद्यालय भेजना, आदि के बारे में अभिभावकों की कोई ख़ास रुचि दिखाई नहीं देती है। सीखने में ज़्यादा समय लेने वाले बच्चों के साथ सबसे बड़ी चुनौती यह होती है कि वे यह धारणा बना लेते हैं कि वह सीख ही नहीं सकते। उनकी यह धारणा अपने-आप नहीं बनती। उनके घर वाले और विद्यालय में कई बार शिक्षक भी

बार-बार सिखाकर जब कोई परिणाम नहीं पाते तो उन्हें उनके हाल पर छोड़ देते हैं। ऐसे विद्यार्थी अकसर मुझे चुनौती लगते हैं। यहाँ मैं एक अनुभव बाँटना चाहूँगी।

तीन बहनें हमारे विद्यालय में पढ़ रही थीं। दोनों बड़ी बहनें पढ़ाई में बेहतर थीं, लेकिन सबसे छोटी बहन बुनियादी पढ़ना-लिखना व संख्याएं भी नहीं सीख पा रही थी। सभी अध्यापक और उसके परिवारजन यह सुनिश्चित कर चुके थे कि उसका कुछ नहीं हो सकता। उसके माता-पिता का कहना था कि समय के साथ वह बालिका भी उग्र और झगड़ालू हो गई थी। कक्षा और विद्यालय के सभी बच्चे उसकी हँसी उड़ाते थे। उसके झगड़ालू और मारपीट करने के स्वभाव के कारण शिक्षकों ने भी उसपर ध्यान करना बन्द कर दिया था। विद्यार्थियों के साथ मेरे अनौपचारिक बातचीत करने के स्वभाव के कारण वह बालिका अकसर मुझसे अपनी पसन्द-नापसन्द की बातचीत करती। बातचीत में, मैंने जाना कि जैसे सब उसे नापसन्द करते हैं, वैसे ही वह भी सबको नापसन्द करती है। मुझे उसमें एक ऐसी बालिका दिखने लगी, जो गाली-गलौच के पीछे अपनी कमज़ोरी को छुपाती थी। मैंने उसे पढ़ाने-लिखाने का मन बना लिया। अपने ख़ाली कालांश में, मध्याह्न भोजन के बाद, और कई बार छुट्टी के बाद भी कुछ देर रुक कर मैंने उसे पढ़ाना शुरू किया। उसका बार-बार भूलना मुझसे ज़्यादा मेरे साथी शिक्षकों और प्रधानाध्यापक को अखरता था। वह अकसर कहते कि क्यों अपना दिमाग़ इसपर खपा रही हो। वे कभी मेरा मज़ाक़ भी बनाते कि यह इस लड़की को कलेक्टर बनाकर ही छोड़ेगी। इन सब बातों को मुझसे ज़्यादा उस बच्ची ने चुनौती के रूप में लिया। देर से ही सही, मेरी मेहनत, उस बच्ची का मुझपर विश्वास, और उसकी ख़ुद की लगन रंग लाने लगी। पहले वर्ण, फिर शब्द और फिर वाक्य, वह अटक-अटक कर पढ़ने लगी थी। यह सब उसने कक्षा 7 में सीखा। हालाँकि, शुद्ध लेखन और परीक्षाओं में याद करके उत्तर लिखना उसके लिए अभी भी दुरूह था। पर अब उसे भी सबको दिखाना था कि वह कर सकती है, और उसने किया। आज वह कक्षा 12वीं की छात्रा है।

मेरा यह मानना है कि चुनौतियों से पार पाने के लिए संवाद और विश्वास बहुत महत्त्वपूर्ण हैं, चाहे वह अभिभावकों के साथ हो या विद्यार्थियों के साथ।

दीपक : बच्चों के साथ काम कैसे करना है, यह कैसे जाना-सीखा?

अर्चना : अनुभव से। जब शिक्षक के रूप में विद्यालय ज्वॉइन किया, तब से लेकर अब तक बच्चों में सीखने को लेकर जो समस्याएँ हैं, उनके पैटर्न को समझा। ज़्यादातर बच्चों के परिवारों में शिक्षा को लेकर गम्भीरता नहीं होना मूल समस्या है। इसके लिए उनके अभिभावकों से बात कर उनको बच्चों की शिक्षा के प्रति और विद्यालय में उनकी नियमित उपस्थिति पर जागरूक किया। अपने अनुभव से ही मैंने यह जाना कि शिक्षण के दौरान बहुत ज़्यादा उदारवादी अथवा सख़्त दृष्टिकोण बच्चों को सीखने से दूर करता है। यहाँ मेरे बचपन के अनुभव भी काम आए। मैं जानती थी कि कक्षा में एक मोटिवेटेड बच्चा क्या अनुभव करता है, और एक उपेक्षित बच्चा क्या। मेरे अन्दर जो एक बच्चा है उससे मैंने बहुत कुछ सीखा, क्योंकि मुझे लगता है कि विशेष परिस्थितियों को छोड़कर बच्चे प्रायः अपनी ख़ुशी और कमज़ोरी में एक-से ही होते हैं।

दीपक : आप जिन कक्षाओं में पढ़ाती हैं, उनमें बच्चों के सीखने के बारे में आप कितनी आश्वस्त हैं? क्या आपकी कक्षाओं में बच्चे स्तरानुसार सीख पा रहे हैं?

अर्चना : जब तक बच्चे मेरे कहने के बाद स्वतंत्र रूप से कार्य नहीं कर लेते, तब तक मुझे लगता है कि उनपर लगातार कार्य करते रहना है। जब विद्यार्थी स्वयं से चिन्तन करके मुझसे अलग कुछ नया सोचते हैं, और मौखिक या लिखित रूप में दर्ज करवाने लगते हैं तब मैं अपने सिखाने को शाबाशी दे लेती हूँ। मेरा प्रयास यही रहता है कि बच्चे अपने स्तरानुसार सीखें। जो बच्चे सीख गए हैं उनका कठिनाई स्तर बढ़ाकर, और जो नहीं सीखे हैं उनपर नियमित रूप से कार्य करती रहती हूँ। अपनी मेहनत पर इतना विश्वास कर सकती हूँ कि आज नहीं तो कल, बच्चे मेरी मेहनत, लगन और उनके प्रति मेरी चिन्ता को समझेंगे। अगर मेरी कक्षा में वह कहीं कमज़ोर भी रह गए तो भी सीखने, आगे बढ़ने की प्रेरणा उन्हें कहीं रुकने नहीं देगी।

दीपक : विद्यालय में पुस्तकालय या रीडिंग कॉर्नर को लेकर आपकी राय क्या है? क्या इससे पढ़ने-लिखने की कोई संस्कृति बनती दिखती है?

अर्चना : विद्यालय में, कक्षा में रीडिंग कॉर्नर का होना निश्चित ही पढ़ने-लिखने को प्रोत्साहन देता है। बचपन से मैंने अपने घर में ही कई पुस्तकें, *सरिता, चंपक, नंदन,* और कई

उपन्यास आते देखे थे, क्योंकि मेरी माँ को भी पढ़ने का बहुत शौक़ था। मैं वहीं से पढ़ने के इस आनन्द को जान गई थी। अपने विद्यार्थी जीवन में भी मैं पुस्तकालय को सबसे अच्छी जगह मानती थी। विद्यालय के नाम पर मुझे सबसे अच्छा स्थान पुस्तकालय, और सबसे अच्छा पुस्तकालय कालांश ही लगता था। तो निश्चित ही, पुस्तकालय या रीडिंग कॉर्नर दरअसल वह जगह होती है जहाँ आप अनौपचारिक रूप से ख़ुद ही बहुत कुछ सीख सकते हैं। जिन बच्चों को पढ़ना नहीं आता, वे भी कहानी-कविताएँ सुनना-सुनाना पसन्द करते हैं। चित्र देखकर कहानी का अन्दाज़ा लगाते-लगाते वे कहीं-न-कहीं सीखने की तैयारी कर रहे होते हैं, और यह तैयारी भविष्य में उनके शिक्षण में सहायक होती है।

दीपक : अर्चनाजी, आपके शैक्षिक कार्यों और विचारों पर आपसे बहुत अच्छी बातचीत हुई। इस बातचीत में शामिल होने व समय देने के लिए बहुत शुक्रिया।

अर्चना अरोड़ा ने व्यावसायिक प्रशासन और हिन्दी साहित्य में स्नातकोत्तर किया है। वे शिक्षा में भी स्नातक हैं। वर्तमान में महात्मा गाँधी राजकीय विद्यालय, ग्वार ब्रह्मणान, सांगानेर, राजस्थान में शिक्षक के पद पर कार्यरत हैं। विगत 19 वर्ष से अध्यापन कर रही हैं। पढ़ना, पढ़ाना और विद्यार्थियों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने में विशेष रुचि है।

सम्पर्क : archanarorajpr@gmail.com

दीपक कुमार राय अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, जयपुर, राजस्थान में 2019 से रिसोर्स पर्सन के रूप में काम कर रहे हैं। आप इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातकोत्तर, और डीफ़िल डिग्री लेने के बाद उच्च शिक्षा में प्राध्यापक के रूप में अध्ययन-अध्यापन से जुड़े रहे। आपने 'दिगंतर' में एसोसिएट फ़ेलो के रूप में शैक्षणिक शोध से जुड़ी गतिविधियों में भागीदारी की है। आपकी इतिहास, साहित्य, विचार और वैचारिकी पर केन्द्रित लगभग एक दर्जन पुस्तकें प्रकाशित हैं। आपने बिहार प्रगतिशील लेखक संघ की पत्रिका *रोशनाई*, साप्ताहिक समाचार पत्र *गणादेश*, *प्रतिश्रुति*, *आवाज़ जन मन की*, *संघतिया* आदि पत्रिकाओं के सम्पादन सहित *सैद्धान्तिकी* और *मतादर्श* नामक दो शोध पत्रिकाओं का भी सम्पादन किया है।

सम्पर्क : deepak.rai@azimpremjifoundation.org

ऑनलाइन

बच्चों को पाठक बनाना : शिक्षकों से उपजे अनुभव

कमलेश चंद्र जोशी

इस लेख में कमलेश जोशी बच्चों में पढ़ने की ललक पैदा करने, और उन्हें उत्साही पाठक बनाने के बारे में बात करते हैं। इसके लिए वे ऐसे शिक्षकों से उनके अनुभव जानते हैं जिन्हें किताबों और पुस्तकालय के महत्त्व पर भरोसा हो, और उन्होंने बच्चों को उत्साही पाठक बनाने के लिए प्रयास किए हों। इस तरह के प्रयास करने वाले शिक्षक उन्हें बताते हैं कि शिक्षकों की पहल से ही बच्चे पाठक बनते हैं। इसके लिए ज़रूरी है शिक्षक ख़ुद भी ढेर सारी किताबें पढ़ें, और उनपर अपनी समझ बनाएँ। किताबों से बच्चों में भाषाई कौशलों और व्यक्तित्व का विकास होता है। बच्चों को अच्छा पाठक बनाने के लिए स्कूल में पढ़ने-लिखने का माहौल होना निहायत ज़रूरी है। स्कूल में अच्छा पुस्तकालय हो, और बच्चे नियमित रूप से पुस्तकालय का उपयोग करें। शिक्षकों ने यह भी बताया कि वे बच्चों में कैसे पढ़ने की रुचि बनाते हैं, उन्हें नियमित रूप से तरह-तरह की किताबें पढ़ने और लिखने के मौक़े देते हैं, कहानियाँ सुनाते हैं, और उनपर बातचीत करते हैं।

https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/4782/

पाठशाला
भीतर और बाहर

पाठकों के विचार

बच्चों के लिखना सीखने में भी सहायक हैं *बरखा* पुस्तकमाला की पुस्तकें, कमलेश चंद्र जोशी, अंक 19

इस लेख में व्यक्त विचारों से मैं बहुत प्रेरित हुआ। वास्तव में, किताबों का ज्ञान बच्चों और हमारे दैनिक जीवन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अच्छी किताबें बच्चों के व्यक्तित्व को निखारने और विकसित करने में मदद करती हैं। शिक्षा में होने के नाते हमें निरन्तर पढ़ते रहना चाहिए। शिक्षक के पढ़ने से बच्चे भी पढ़ने के लिए प्रेरित होते हैं, और उनमें पढ़ने की आदत का विकास होता है। बच्चों द्वारा पढ़ी गईं किताबों पर उनसे चर्चा करना भाषा विकास की दृष्टि से हमेशा फ़ायदेमन्द होता है।

भैयालाल महोबिया, माध्यमिक शाला लसुड़िया परिहार, जनशिक्षा केंद्र कस्तूरबा, ज़िला सीहोर

और पुस्तकालय चल पड़ा : बड़े काम की छोटी–सी शुरुआत, राजाबाबू ठाकुर, अंक 19

लेखक ने जिस विधि से शिक्षकों को पुस्तकालय के प्रति संवेदनशील बनाया और बच्चों को इसकी ओर आकर्षित किया, वह क़ाबिले तारीफ़ है। शिक्षकों के सामने पुस्तकालय संचालन में आने वाली समस्याओं का निराकरण कर उन्होंने सकारात्मक परिणाम प्राप्त किए। लेख पुस्तकालय के महत्त्व और इसे गतिमान करने की दिशा में शिक्षकों को रास्ते सुझाता है।

लेख को पढ़कर कई विद्यालयों के पुस्तकालय जीवन्त होंगे, और बच्चों को कल्पना करने, अतीत में जाने, सोचने, तर्क करने और आनन्द लेने के अवसर मिलेंगे।

सरोजनी रावत, शिक्षिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय खारास्रोत, नरेंद्रनगर, ज़िला टिहरी गढ़वाल

पहाड़, जिसे एक चिड़िया से प्यार हुआ, प्रभात, अंक 19

मैंने इस किताब को कुछ साल पहले पढ़ा था, और तब भी यह मुझे बहुत पसन्द आई थी। किताब के शीर्षक ने मुझे सोचने पर मजबूर किया कि आख़िर यह शीर्षक क्यों है। पहाड़ और चिड़िया का क्या मेल है? लेखक की कल्पना ने शब्दों के माध्यम से एक तस्वीर बनाई है जिससे हम पात्रों और घटनाओं से जुड़ते चले जाते हैं। लेखक ने किताब की बारीक़ियों और घटनाओं का अद्भुत विश्लेषण किया है जिसने मुझे इस किताब को पुनः पढ़ने पर मजबूर

कर दिया। यह लेख किसी कथानक की परतों को सामाजिक ताने-बाने और भाषाई दृष्टिकोण से देखने का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करता है।

प्रेरणा, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला सीहोर

साक्षात्कार, अंक 19

रश्मि पालीवाल के साक्षात्कार से यह बात सामने आती है कि एक चिन्तनशील शिक्षक अपने विद्यालय के प्रत्येक बच्चे के लिए एक लक्ष्य निर्धारित करता है, और उसे प्राप्त करने के लिए रणनीति बनाता है। उनके अनुसार, "हर बच्चे के लिए मेरा एक लक्ष्य होता है, जिसे पाने के लिए मैं कर्म करती हूँ। मैं उस प्रक्रिया में संलग्न रहती हूँ और परिणामों पर विचार करती हूँ। यदि परिणाम सन्तोषजनक नहीं होते तो मैं बेहतर तरीक़े से लक्ष्य तक पहुँचने के नए रास्ते तलाशने और जानकारी इकट्ठा करने की कोशिश करती हूँ ताकि लक्ष्य तक बेहतर तरीक़े से पहुँच सकूँ।"

मैं इस विचार से पूरी तरह प्रभावित हूँ। मेरा भी यही उद्‌देश्य रहता है कि बच्चों को उनके निर्धारित स्तर का ज्ञान दिलाने में हर सम्भव मदद करूँ ताकि लक्ष्य को प्राप्त कर सकूँ। एक शिक्षक को यह समझना चाहिए कि बच्चों के सीखने का प्रतिफल उसका व्यक्तिगत लक्ष्य है, जिसे हासिल करने के लिए उसे सतत प्रयास करने होते हैं। हमें केवल किताबें पढ़ाने तक सीमित नहीं रहना चाहिए, बल्कि शिक्षा के नए विचारों को अपनाते हुए अपने विकास के साथ-साथ बच्चों के विकास की ओर भी बढ़ना चाहिए।

बरखा रानी अहिरवार, शासकीय प्राथमिक शाला चिकनोटा, ज़िला सागर

रचनात्मक विवाद द्वारा सीखना, अमन मदान, अंक 20

यह लेख शिक्षकों और बच्चों, दोनों के लिए एक बेहद महत्त्वपूर्ण है। मैं स्कूल के बच्चों और ख़ुद के बीच भी ऐसे तमाम विवाद रोज़ महसूस करती हूँ। लेकिन अन्त में, अकसर ख़ुद का निर्णय ही सुनाती हूँ। इससे थोड़ी देर के लिए बच्चे शान्त हो जाते हैं, और अनमने ढंग से मेरी बात स्वीकार लेते हैं, लेकिन दूसरे दिन फिर वही विवाद मेरे सामने आ जाता है। लेखक ने आसान और सहज भाषा में इन परिस्थितियों से जूझने के लिए जिस तरह की गतिविधियों को सुझाया है, मेरी राय में वे निःसन्देह काफ़ी मददगार होंगी। आमतौर पर हम विचारों की विविधता का ध्यान नहीं रखते हैं। यह एक सजग शिक्षक और एक अच्छे स्कूल के लिए ठीक नहीं है।

लेख को पढ़ते हुए मुझे लगा कि स्कूल और कक्षा में एक सकारात्मक माहौल बनाने के लिए हमें विवादों को हल करने की बच्चों की सूझबूझ का इस्तेमाल करना चाहिए। इससे हम बच्चों को भी सही मायने में सम्मान देने में समर्थ हो सकेंगे।

आरज़ू जैन, सहायक शिक्षक, शासकीय प्राथमिक शाला कनऊ, खुरई, ज़िला सागर

यह लेख पढ़कर मुझे अपनी समस्या का समाधान मिल गया। समस्या यह थी कि जब भी मैं कक्षा में किसी विषय पर डिबेट कराती, थोड़ी ही देर में बच्चे आक्रामक रुख़ अपना लेते। इसलिए बीच में बार-बार मुझे हस्तक्षेप करना पड़ता। फिर इसका समाधान ये निकाला गया कि

जब एक पक्ष पहले अपनी पूरी बात रख लेगा तभी दूसरा पक्ष अपनी बात रखेगा। लेकिन इसमें नीरसता का अनुभव होता। इस लेख में पढ़ा कि जब जोड़े आपस में स्थान बदलते हैं तो एक दूसरे के विचारों का खण्डन करने वाले तर्क, एक दूसरे के विचारों पर मनन करने में बदल जाते हैं। इससे बच्चों में किसी बात के दोनों पहलुओं (सकारात्मक और नकारात्मक) पर विचार करने की संस्कृति का विकास होगा। मुझे यह लेख बेहद उपयोगी जान पड़ता है। एक शिक्षक और पाठक के रूप में मुझे यह लेख मार्गदर्शक लगा। मैं इस विधि का प्रयोग निश्चित ही अपनी कक्षा के विद्यार्थियों के साथ करूँगी।

अनीता ध्यानी, सहायक अध्यापक हिन्दी, राजकीय इंटर कॉलेज लखवाड़, विकासखण्ड कालसी, ज़िला देहरादून

इस लेख को पढ़कर एक अच्छे परिप्रेक्ष्य की समझ बनी। स्कूलों में सीखने का पारम्परिक तरीक़ा अकसर एकतरफ़ा होता है। यहाँ शिक्षक ज्ञान देते हैं, और विद्यार्थी उसे ग्रहण करते हैं। लेकिन इस लेख से मेरी यह समझ बनी कि क्या होगा अगर हम सीखने को एक अधिक संवादात्मक और सहयोगी प्रक्रिया बना दें। रचनात्मक विवाद इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण क़दम हो सकता है। लेखक ने इस लेख के माध्यम से सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं में एक विधा शामिल की है। यह विधा एक ऐसी प्रक्रिया की ओर ध्यान आकर्षित करती है जिसमें विद्यार्थी विभिन्न विचारों और दृष्टिकोणों को रखते हुए किसी विषय पर गहन चर्चा करते हैं। यह एक विवादात्मक स्थिति न होकर एक ऐसा मंच है जहाँ विद्यार्थी अपने विचारों को स्पष्ट करते हैं, दूसरों के विचारों को सुनते हैं, और अन्ततः एक समूह के रूप में एक बेहतर समझ विकसित करते हैं। इसे पढ़कर मुझे यह समझ बनाने में भी मदद मिली कि ये विद्यर्थियों में गहन सोच को बढ़ावा दे सकता है। रचनात्मक विवाद में विद्यर्थियों को विभिन्न दृष्टिकोणों का विश्लेषण करना होता है जिससे उनकी गहन सोच विकसित होती है, उनके संचार व सहयोगात्मक कौशल में सुधार आ सकता है, उनमें समस्या समाधान कौशल विकसित करने में मदद मिल सकती है, और वे विभिन्न दृष्टिकोणों को मिलाकर समस्याओं का समाधान ढूँढ़ना सीख सकेंगे। और सबसे बड़ी बात, रचनात्मक विवाद द्वारा विद्यार्थी अपने विचारों को स्पष्ट रूप से व्यक्त करना, और दूसरों की बातों को ध्यान से सुनना सीखते हैं।

विवेक सोनी, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला चमोली

इस लेख में रचनात्मक संवाद की जो संस्कृति प्रस्तुत की गई है वह बेहद उपयोगी है। बच्चों के साथ रचनात्मक विवाद पर कार्य करना बेहद अच्छा होगा। आलेख में, झरने या चिड़ियाघर जाने को लेकर बच्चों के बीच हुए रचनात्मक विवाद का जो उदाहरण दिया गया है, वह किसी के लिए भी प्रेरणादायी है।

हमें अपने निजी जीवन में भी विवादों का समाधान करने के लिए इस रीति का अनुसरण करना चाहिए क्योंकि जहाँ असमानता होती है, वहाँ विवादों का सामना अधिक करना पड़ता है। ऐसे विवादों और असमानता को कम करने के लिए रचनात्मक विवाद एक अच्छा माध्यम साबित हो सकता है।

अंजू यादव, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, ज़िला अलवर

जोड़–घटाना : स्कूल के गणित का ज़िन्दगी के गणित से अलगाव, मीनू पालीवाल, अंक 20

यह लेख बताता है कि बच्चे खड़े जोड़ करते हैं, लेकिन आड़े जोड़ में ग़लतियाँ करते हैं। हासिल के जोड़ में भी बच्चों को समस्याएँ आती हैं। इसका कारण उनमें प्रक्रियात्मक समझ की कमी होती है जिससे वे सवाल को विभिन्न आयामों से देखने में असफल रहते हैं। लेखिका ने ज़ोर दिया है कि सन्दर्भ के साथ सवाल हल करना और बनाना, सीखने की प्रक्रिया में मददगार होता है। इबारती सवाल बच्चों को जीवन के गणित से जोड़ते हैं। अगर बच्चों को अपने अनुभव से सवाल की इबारत बनाने का मौक़ा मिले तो वे इसे बेहतर तरीक़े से समझ सकते हैं।

मैंने भी पाया है कि बच्चे खड़े जोड़ आसानी से कर लेते हैं क्योंकि उनमें उन्हें एक पैटर्न दिखता है, जबकि आड़े जोड़ के लिए अधिक सजगता की ज़रूरत होती है जो अभ्यास से आती है। यह अभ्यास सन्दर्भित सवालों के साथ हो, और बच्चों को अपने जवाब पर सोचने, तर्क ढूँढ़ने और उसे पुष्ट करने के मौक़े मिलें।

मुझे लगता है कि पाठ्यपुस्तकों में भी इबारती सवाल अन्त में दिए जाते हैं, जबकि सन्दर्भित सवालों की शुरुआत से ही आवश्यकता है। यह लेख गणित शिक्षण में जोड़-घटाव की समस्याओं और उनके समाधान के लिए उपयोगी प्रक्रियाओं को बेहतर तरीक़े से सामने लाता है।

मुरलीधर, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला टोंक

मैटी, बैठ जाओ। बैठ जाओ मैटी! : मैटी के ज़रिए बच्चों के विकास के मुद्दों को समझने की कोशिश, दीपाली शुक्ला, अंक 20

अनुक्रम पढ़ते हुए मेरा ध्यान एक लेख के शीर्षक पर गया। मैटी, बैठ जाओ। बैठ जाओ मैटी! शीर्षक पढ़ते ही मस्तिष्क में एक ख़्याल आया कि मैटी, कोई एक बच्चा है जो बहुत शरारती है, जिसने अपने शिक्षक या अभिभावक को बहुत परेशान किया है और वह उससे तंग हो गए हैं। यह सोचते ही मुझे लगा कि यह लेख मुझे पढ़ना चाहिए, मुझे भी समझना है कि कैसे इस बच्चे के साथ काम किया गया।

मन में चल रही उथल-पुथल के साथ लेख पढ़ रही थी तो समझ में आया कि यह लेख किसी किताब की समीक्षा पर आधारित है। मन थोड़ा उदास हुआ कि इसमें तो किताब की समीक्षा लिखी हुई है। मन की ऊहापोह के साथ लेख पढ़ती गई, और पता ही नहीं चला लेख कब समाप्त हो गया। मेरे मन में जो सवाल चल रहे थे, न जाने कहाँ चले गए, या कह सकते हैं लेख लिखने की इस कला ने उन्हें समाप्त कर दिया। इसे पढ़ने के बाद मुझे समझ में आया कि किसी किताब की समीक्षा को इस प्रकार लिखा जाए कि एक पाठक उस किताब को पढ़ने के लिए उत्सुक हो सके, और उसे लगे कि कब वह पुस्तक उसे मिले और वह उसे पढ़े।

लेख की एक महत्त्वपूर्ण बात ने मेरा ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि मैटी जैसे बच्चों के विकास के मुद्दों को समझना कितना महत्त्वपूर्ण है। हमारे पास न जाने ऐसे कितने बच्चे आते हैं, और हम उन्हें यह सोचकर नज़रन्दाज़ कर देते हैं कि कुछ बच्चे ऐसे होते ही हैं जो दूसरे बच्चों की शिक्षा व विकास को तो प्रभावित करते ही हैं, साथ ही स्कूल और घर का वातावरण भी ख़राब करते हैं।

इस लेख में लिखा हुआ एक पद ‘बच्चों की विविधता और बचपन की विविधता’ अपने में काफ़ी गहरा अर्थ समाहित किए हुए है। इसे समझकर हम अपने कार्यकाल के दौरान मैटी जैसे असंख्य बच्चों को विद्यालय की मुख्य धारा में जोड़ सकते हैं, और शिक्षा के एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य को पूरा कर सकते हैं। मैटी की शिक्षिका का धैर्य व बच्चे के विकास को देखने-समझने का नज़रिया हमें सिखाता है कि हमें भी ऐसा नज़रिया विकसित करने की आवश्यकता है।

मीमांशा गौंदियाल, सन्दर्भ व्यक्ति अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, श्रीनगर, जिला पौड़ी गढ़वाल

पाठ्यपुस्तक की कहानियाँ और भाषा शिक्षण, प्रवीण श्रीवास्तव, अंक 20

इस लेख में लेखक ने कक्षा में कहानी शिक्षण के लिए ऐसी प्रक्रियाओं को शामिल करने का सुझाव दिया है, जो भाषा शिक्षण के उद्देश्य को पूरा करें। उन्होंने यह भी बताया है कि कहानी पढ़ाने से पहले हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि बच्चे कहानी के आधार पर सोच सकें, उससे जुड़ाव बना सकें, और अपने विचार व्यक्त कर सकें। इस दृष्टिकोण को पाठ योजना में शामिल करना आवश्यक है।

ज्योति देशमुख, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, बीना, ज़िला सागर

इस लेख को पढ़ने के बाद यह समझ में आया कि पाठ्यपुस्तक में दी गई कहानियाँ बच्चों और शिक्षकों का ध्यान कम ही खींच पाती हैं। लेकिन यदि कक्षा शिक्षण की प्रक्रियाओं में इनको रोचकता के साथ प्रस्तुत किया जाए तो इन कहानियों का असर बढ़ सकता है। लेखक ने कहानियों पर काम करने के नए तरीक़ों को प्रस्तुत किया, जो शिक्षण में मददगार साबित हो सकते हैं। लेख में यह स्पष्ट किया गया है कि यदि कक्षा में ऐसी प्रक्रियाओं को अपनाया जाए तो बच्चों का ध्यान आकर्षित किया जा सकता है, और उन्हें सीखने में मदद मिल सकती है।

राम नरेश गौतम, सदस्य, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, खुरई, ज़िला सागर

उस रात चाँद नहीं निकला : एक कहानी कहन, मेलोडी खलखो, अंक 20

यह आलेख एक कहानी सुनाने का अनुभव है। कहानी का चयन अच्छा है और लेखिका ने इसका प्रस्तुतीकरण बेहद संवेदनशीलता के साथ किया है। लेख बताता है कि बच्चे कितना कुछ सोच और समझ सकते हैं। वास्तव में, विद्यालय में बच्चों के साथ कार्य करते हुए कहानियाँ अपना एक अलग ही रोल अदा करती हैं। बच्चे अपनी व अपने समाज में होने वाली सब बातों को समझते हैं। वह अपने आसपास होने वाले कार्यों को भी देखते-समझते रहते हैं। उनके बचपन को हम उनका बचपना कहकर ख़त्म नहीं कर सकते। जब हम बच्चों को ऐसी किताबें उपलब्ध कराते हैं, हम उनके नज़रियों, अनुभवों, उनकी पसन्द-नापसन्द को जान पाते हैं। यह एक बेहद महत्त्वपूर्ण आलेख है।

पूनम भाटिया, प्रधानाध्यापिका, राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालय बम्बाला, सांगानेर, ज़िला जयपुर

गणित तर्क की क्षमता कैसे बढ़ाता है?, मुकेश मालवीय, अंक 20

प्राथमिक स्तर पर बच्चों के साथ गणित विषय के विविध सम्बन्धों पर कार्य करना आसान नहीं है, ख़ासकर अगर गणितीय सूत्रों और विधियों से इतर सवालों में निहित अलग-अलग परिस्थितियों पर उनकी सोचने-विचारने और प्रश्न पूछने की समझ का विकास करना हो। लेख में गणित सीखने के इसी महत्त्वपूर्ण पहलू को ‘तर्क करने की क्षमता’ कहा गया है। शिक्षण के दौरान, इसपर ज़्यादा

ध्यान नहीं दिया जाता। यह लेख पढ़ने में बेहद प्रभावी है, और बताता है कि यह क्षमता गणित करते हुए, समझते हुए और समस्याओं से जूझते हुए उपजती है। जब हम अपनी पिछली समझ का इस्तेमाल नई परिस्थितियों में करते हुए इसे अपने दैनिक जीवन से जोड़ पाते हैं, यही हमारे अन्दर 'तुलना' करने का नज़रिया विकसित करता है। इसकी शुरुआत जीवन के आरम्भिक दौर से ही हो जाती है। तुलना करने के कुछ ठोस आधार होते हैं। ये कभी मात्रा, वज़न, आकार, दूरी, तो कभी रूप-रंग, गन्ध, हावभाव, ठोस, द्रव और गैस, आदि से उपजी अवस्थाओं से तय होते हैं। यह लेख तुलना करने की इस क्षमता को गणित सीखने का बुनियादी आधार बनाने की वकालत करता है।

तुलना करने का हुनर जहाँ हमें सोचने-विचारने और समझने के लिए प्रेरित करता है, वहीं ढेर सारे सवाल पूछने का मौक़ा भी देता है। यह लेख गणित के सवालों के समाधान के लिए प्रयुक्त सूत्रों और विधियों पर पर्याप्त बातचीत करके समझ बनाने का नज़रिया विकसित करता है। बच्चों के साथ बेहतर तालमेल व रिश्ता बनाकर काम करने की दिशा प्रदान करने के साथ-साथ उनकी सहमतियों-असहमतियों का ख़्याल रखने व उन्हें पर्याप्त जगह देने की समझ भी यह आलेख देता है।

विजय आनंद नौटियाल, सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला बागेश्वर, उत्तराखंड

रीडिंग कॉर्नर का रोमांचक अनुभव, शाह आलम, अंक 20

लेखक ने बेहद सहजता से विभिन्न स्कूलों में रीडिंग कॉर्नर को क्रियाशील बनाने के लिए किए गए प्रयासों की यात्रा को बहुत सरल व सुव्यवस्थित तरीक़े से पाठकों के समक्ष रखा है। रीडिंग कॉर्नर क्या है; इसे संचालित कैसे करना है; क्या-क्या चुनौतियाँ आ सकती हैं; इन सारे बिन्दुओं पर लेखक ने बात की है। उन्होंने कक्षा एक व दो में रीडिंग कॉर्नर होने की महत्ता में पुस्तकों के चयन की ओर इशारा करते हुए बताया है कि किस प्रकार बच्चे चित्रों व एक लाइन वाली पुस्तकों से प्रेरित होते हैं। लेख में यह भी इंगित किया गया है कि पढ़ने के साथ-साथ लेखन में भी रीडिंग कॉर्नर बहुत मददगार हो सकता है।

मोहन चन्द्र पाठक, लाइब्रेरी सन्दर्भ व्यक्ति, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, ज़िला देहरादून

कविता–कहानी की मज़ेदारी : कक्षा के अनुभव, रंजीता वर्मा, अंक 20

इस लेख के माध्यम से मुझे कक्षा में किसी कहानी को रोचक तरीक़े से सिखाने के कई महत्त्वपूर्ण उदाहरण और प्रक्रियाएँ समझ में आईं। मसलन, लेखिका ने कहानी में बच्चों के परिवेश और उनके अनुभवों को शामिल किया; कहानी पर काम करने के बाद बच्चों को शीर्षक के आधार पर चित्र बनाने का अवसर प्रदान किया; कहानी पर अलग-अलग सवाल बनाने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित किया; सुनाई या पढ़ाई गई कहानी का सारांश मौखिक या लिखित रूप में प्रस्तुत करने के मौक़े प्रदान किए; आदि। इन्हें अब मैं अपनी कक्षा में लागू करने का प्रयास कर रहा हूँ।

नर्मदा प्रसाद कुर्मी, प्राथमिक शिक्षक, शासकीय एक परिसर–एक शाला विनायठा, खुरई, ज़िला सागर

आमतौर पर, हम प्रशिक्षण के दौरान सुझाए गए तरीक़ों को यह मानकर अपनी कक्षा में अपनाने में संकोच करते हैं कि वह सिर्फ़ उनकी कक्षा के लिए उपयुक्त हैं। लेकिन जब लेखिका ने उन तरीक़ों को अपनी कक्षा में लागू किया तो उन्हें शानदार परिणाम मिले। बच्चे बेहतर तरीक़े से

और अधिगम परिणामों के अनुरूप सीख रहे थे। इस लेख के माध्यम से मुझे कक्षा में किसी कहानी या कविता पर काम करने के विभिन्न चरणों की जानकारी मिली, जिन्हें मैं अपनी कक्षा के बच्चों के साथ अपनाने का प्रयास करूँगी।

श्रीमती आकृति तिवारी, प्राथमिक शिक्षक, सीएम राइज़ स्कूल गड़ोला जागीर, खुरई, ज़िला सागर

हम अकसर मान लेते हैं कि बच्चे एक बार में वही सीखेंगे, जो हमने ख़ुद कई बार पढ़ा है। लेकिन लेखिका ने पाठ्यपुस्तकों की कहानियों पर काम करते हुए बच्चों को विभिन्न सवाल बनाने के मौक़े दिए। इन सवालों के माध्यम से बच्चों ने अपने अनुभव साझा किए। लेख को पढ़कर मैंने समझा कि बच्चों से नई कहानियाँ लिखवाना, चित्र बनवाना, रोलप्ले करवाना, सवाल बनवाना, बातचीत करना जैसी गतिविधियाँ रोचक और प्रेरणादायक हो सकती हैं। इससे यह अहसास हुआ कि जब हम बच्चों को समस्याओं पर अपनी राय व्यक्त करने का मौक़ा देते हैं तो समाधान सहज और सरल हो सकता है।

जीतेश दुबे, सहायक शिक्षक, एकीकृत माध्यमिक शाला तोड़ा काछी, खुरई, ज़िला सागर

लेखन में सहायक एक गतिविधि : डायरी लेखन, प्रतिभा शर्मा, अंक 20

इस लेख से लिखना सिखाने के एक महत्त्वपूर्ण तरीक़े 'डायरी लेखन' के बारे में कई बातें पता चलती हैं। दिनभर हुए अनुभवों को सँजोने के साथ कल्पना, सोच को रचनात्मक रूप से अभिव्यक्त करने का डायरी एक अच्छा ज़रिया बनती प्रतीत होती है। बच्चों में इसके मार्फ़त संवाद की शुरुआत होने और इस दिशा में उत्तरोत्तर आगे बढ़ने का रास्ता साफ़ नज़र आता है। डायरी लेखन में बच्चे के लिखे पर बातचीत करना, ख़ुद लिखकर साझा करना, दूसरे लोगों की लिखी डायरियों को पढ़कर सुनाना जैसी गतिविधियाँ उनके डायरी लिखना सीखने में मदद करती हैं। इन सभी बातों का ज़िक्र यह लेख करता है। बच्चों के साथ मेरा ऐसा ही एक अनुभव समर कैम्प के दौरान का है। मैंने जब बच्चों को दिनभर किए गए कार्यों को लिखकर लाने को कहा तो उन्होंने सिर्फ़ एक-दो लाइनों में अपनी बात कही। आगे के दिनों में, मैंने बच्चों से लगातार बातचीत की और उनको कुछ डायरियाँ पढ़कर सुनाईं। इससे लेखन में उनके अनुभव तो शामिल होने लगे, लेकिन उनमें तारतम्यता, कल्पनाशीलता जैसे पक्षों को शामिल करने के लिए बच्चों से नियमित संवाद व निरन्तरता की ज़रूरत थी। हालाँकि, बाद के दिनों में यह सम्भव नहीं हो पाया। लेकिन यहाँ ये बात महत्त्वपूर्ण है कि लिखना भी सीखना पड़ता है, और उसके लिए लगातार अभ्यास की ज़रूरत होती है।

मुकेश चंद्र शर्मा, संदर्भ व्यक्ति जिला टोंक, राजस्थान

पाठशाला में बहुत-से अनुभव आधारित लेख ऐसे होते हैं जिनको पढ़कर लगता है कि हम अपनी कक्षा में हैं, और ये हमें कुछ नया करने की प्रेरणा देते हैं।

इस लेख में, लेखिका ने पाठ पढ़ने के बाद बच्चों में लेखन कौशल विकसित करने के लिए डायरी लेखन का ज़िक्र किया है। इसमें जाने अनजाने में बच्चे अपने मन के भावों, विचारों को अभिव्यक्त करने में सहजता महसूस करते हैं। मैं ख़ुद भी बच्चों से डायरी लेखन करवाती हूँ जिससे उनमें अपने विचारों को व्यक्त करने का आत्मविश्वास बढ़ा, स्वतंत्र लेखन का विकास हुआ, और

उनमें लिखने के प्रति रुचि उत्पन्न हुई है। डायरी लेखन का एक अच्छा प्रभाव यह हुआ कि कुछ बच्चों ने ख़ुद ही अपनी उन आदतों को छोड़ा जो उन्हें लिखने में ग़लत लग रही थीं।

इन्दु पंवार, प्रधानाध्यापिका, राजकीय प्राथमिक विद्यालय गिरगांव, ज़िला पौड़ी गढ़वाल

साक्षात्कार, अंक 20

'बच्चे स्कूल में रोज़ाना कुछ सीखकर जाएँ', सिद्धार्थ कुमार जैन की शिक्षिका शगुफ्ता बेग से हुई बातचीत के अंश उनकी शिक्षण प्रक्रियाओं, काम करने के तरीक़ों और उनके हौसले को दर्शाते हैं। दूसरे शिक्षक साथियों से सीखना और उसे ख़ुद पर लागू करने की प्रतिबद्धता भी उनकी बातों में झलकती है। गणित विषय की पेचीदगी में, बच्चों के मनोविज्ञान को समझकर उसे रुचिकर बनाने का कौशल, उनसे सीखने लायक़ है। बच्चों के स्तर के आधार पर कार्ययोजना बनाना, उसके अनुसार टीएलएम तैयार करना, कक्षा में जाने से पहले ख़ुद की तैयारी को महत्त्वपूर्ण मानना और उसे अपनाना, शगुफ्ता बेग को एक अलग ही श्रेणी के शिक्षकों की क़तार में खड़ा करता है।

गणेश प्रसाद बलोनी, पौड़ी, जिला पौड़ी गढ़वाल

पाठशाला भीतर और बाहर, अंक 20

पत्रिका में प्रकाशित शिक्षणशास्त्र से सम्बन्धित सभी आलेख उच्च स्तरीय हैं, जिनमें मुख्यतः कहानियों की बात की गई है। इनमें बताया गया है कि हम किस तरह बच्चों के विकास के मुद्दों को समझें, अर्थात समझने की एक कोशिश, एक पहल इनमें दर्शाई गई है। *पाठशाला* के सभी आलेख बहुत सशक्त होते हैं। ये विमर्श व तर्कशक्ति को बढ़ाते हैं, और रोमांचक अनुभव भी दर्शाते हैं। अलग-अलग व्यक्तियों के अनुभवों से हम यह सीख सकते हैं कि कक्षा-कक्षीय गतिविधियाँ किस तरह से होनी चाहिए। विज्ञान, गणित, पर्यावरण, कहानी, कविता, लेखन, रीडिंग कॉर्नर, भाषा शिक्षण, बाल संसद, रचनात्मक विवाद, आदि कुछ विषय इस बार की पत्रिका के प्रमुख बिन्दु थे। *पाठशाला* पत्रिका अपने-आप में शिक्षण जगत के लिए सम्पूर्ण पत्रिका मानी जा सकती है। इसमें प्रकाशित हर आलेख से हम सीखते हैं और सीखने की कोशिश करते रहते हैं।

डॉ. सुमन बिष्ट, राजकीय प्राथमिक विद्यालय हाज्यावाला, सांगानेर, ज़िला जयपुर

लेखकों के लिए

1. लेख वर्ड फ़ाइल में ही भेजें जिसमें कोई डिज़ाइन, बॉर्डर, बॉक्स, आदि न हों। लेख पीडीएफ़ में न भेजें।
2. लेख से सम्बन्धित तस्वीरें या कोई अन्य विज़ुअल अच्छी क्वालिटी का हो, और उसे वर्ड फ़ाइल में लगाकर भेजने की बजाय अलग से अटैच करके भेजें। तस्वीर को image 1, image 2 के नाम से सेव करके भेजें, और लेख में लिख दें कि कहाँ पर आपको लगता है कौन–सी तस्वीर लगनी चाहिए। हालाँकि, इस बारे में अन्तिम निर्णय सम्पादकीय टीम का होगा।
3. तस्वीर का सोर्स ज़रूर बताएँ। कॉपीराइट का ध्यान रखें कि तस्वीर या तो कॉपीराइट फ़्री हो, या जहाँ से ली गई है वहाँ से अनुमति ली गई हो, या आभार व्यक्त किया गया हो। अगर तस्वीर आपने ख़ुद ली है तो वह भी बताएँ, और तस्वीर लेते समय, स्कूल या क्लासरूम से इजाज़त ज़रूर लें।
4. बच्चों की तस्वीरें बिलकुल न लें, ख़ासकर ऐसी तस्वीरें जिनमें उनका चेहरा स्पष्ट हो।
5. लेख में जब भी किसी किताब का अंश, लेख का अंश, किसी लेखक के उद्धरण (quote) इस्तेमाल में लाएँ, कृपया उनका उल्लेख ज़रूर करें, और क्रेडिट दें।
6. अपने लेख के साथ अपना संक्षिप्त परिचय, एक फ़ोटो जिसमें आपका चेहरा सामने से स्पष्ट और क्लोज़ हो, मोबाइल नम्बर, पूरा पता, और ईमेल आईडी भी दें।
7. जो भी लेख आप पाठशाला के लिए भेज रहे हैं, यह बहुत ज़रूरी है कि उसे न तो कहीं और भेजा गया हो न ही सोशल मीडिया पर साझा किया गया हो।
8. लेख मिलने पर आपको लेख के मिलने की सूचना तुरन्त दी जाएगी, और 30 दिन के अन्दर लेख की स्वीकृति या अस्वीकृति, या उसमें सुधार के सम्बन्ध में सूचना प्रेषित की जाएगी।
9. पत्रिका में लेखों की तीन श्रेणियाँ हैं। पहली श्रेणी में लेख 2000 शब्दों का, दूसरी में 1500 शब्दों, और तीसरी श्रेणी में यह 700 से 1000 शब्दों का होगा।
10. सम्पादकीय टीम को लेख में सम्पादन का अधिकार होगा। ज़रूरी सम्पादन के बाद आपको लेख भेजा जाएगा।
11. पाठशाला अब हिन्दी के अतिरिक्त अँग्रेज़ी और कन्नड़ में भी प्रकाशित होगी। माने, आप तीनों में से किसी भी भाषा में लेख भेज सकते हैं। लेख भेजने का आईडी है : pathshala@apu.in
12. आपने जिस भी मौलिक भाषा में लेख भेजा है, अनुवाद होकर तीनों भाषाओं में प्रकाशित होगा। इसका अधिकार सम्पादकीय टीम को होगा।

किसी भी तरह की अन्य जानकारी के लिए आप कॉल कर सकते हैं— प्रतिभा (हिन्दी) : 9456591379, शेफाली (अँग्रेज़ी) : 9886031023, राघवेंद्र हेर्ले (कन्नड़) : 9945946661

मुद्रक तथा प्रकाशक शरद सुरे द्वारा अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन फॉर डिवलपमेंट के लिए अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, प्लॉट नं. 163-164, त्रिलंगा कोऑपरेटिव सोसाइटी, E-8 एक्सटेंशन, त्रिलंगा भोपाल, मध्यप्रदेश 462039 की ओर से प्रकाशित एवं गणेश ग्राफ़िक्स, 26-बी, देशबंधु परिसर, प्रेस काम्प्लेक्स, एम.पी. नगर, जोन-1, भोपाल द्वारा मुद्रित।

सम्पादक : गुरबचन सिंह

Anuvada Sampada

अनुवाद सम्पदा

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय की अनुवाद रिपॉज़ेटरी

अवधारणाओं तथा विचारों के साथ गहराई से जुड़ने हेतु विद्यार्थियों और शिक्षकों के लिए भारतीय भाषाओं में उच्च गुणवत्ता के 3000 से अधिक शैक्षणिक संसाधनों का भण्डार।

भारतीय भाषाओं में शैक्षणिक संसाधनों के लिए निशुल्क, ओपन-एक्सेस पोर्टल

- पुस्तकें और पुस्तक अंश
- अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के प्रकाशनों से लेख
- विभिन्न संगोष्ठियों और रीडरों से चुनिन्दा लेख

अनुवाद सम्पदा के लिए लिंक :
https://anuvadasampada.azimpremjiuniversity.edu.in/